नम श्रीवर्द्धमानाय ।

स्वर्गीय कविवर भूधरदासविरचित

# पार्श्वपुराण ।



( जैनसिद्धान्तगर्भित सुन्दर काव्यग्रन्थ । )



प्रकाशक—

जैन ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,

हीराबाग, गिरगाँव, बम्बई ।



आषाढ़ १९७५ वि० ।



द्वितीयावृत्ति ]       वीर नि० सवत् २४४४ ।       [ मूल्य १]

प्रकाशक –
**नाथूराम प्रेमी,**
हिन्दी-ग्रन्थरत्नाकर कार्यालय,
हीराबाग पो० गिरगाँव-बम्बई।



मुद्रक –
रा रा **चिंतामण सखाराम देवळे,**
मुंबईवैभव प्रेस, सर्व्हंट्स ऑफ इंडिया
सोसायटीज् बिल्डिंग, सँढर्स्ट रोड,
गिरगाँव-बम्बई।

# ग्रन्थकर्त्ताका परिचय ।



पार्श्वपुराणके रचयिता कविवर भूधरदासजी आगरेके रहनेवाले खण्डेलवाल जैन थे। संवत् १७८९ में आपने इस ग्रन्थको समाप्त किया है। इसके पहले आप सं० १७८१ में 'जैनशतक' बना चुके थे। जैनशतकमें १०७ कवित्त, सवैया, दोहा और छप्पय है। इसका प्रत्येक पद्य अपने अपने विषयको स्वतंत्र रूपसे कहनेवाला है। इसे एक प्रकारका 'सुभाषित-संग्रह' कहना चाहिए। बहुत ही सुन्दर रचना है। जैनसमाजमें इसका अच्छा प्रचार है। जैनशतकके सिवाय आपका एक ग्रन्थ पदसंग्रह है जिसमें लगभग ८० पद और स्तुतियाँ आदि हैं। जान पड़ता है, यह आपकी जुदा जुदा समयकी रचनाओंका संग्रह है जो किसीने पीछेसे कर दिया है । इसमेंके कोई कोई पद बड़े ही हृदयग्राही और प्रभावशाली है। वे आपके एक अच्छे कवि होनेकी साक्षी देते है।

हिन्दीके जैनसाहित्यमें पार्श्वपुराण ही एक ऐसा चरितग्रन्थ है, जिसकी रचना उच्चश्रेणीकी है, जो वास्तवमें पढ़ने योग्य है और जो किसी संस्कृत प्राकृत ग्रन्थका अनुवाद करके नहीं किन्तु स्वतन्त्ररूपसे लिखा गया है।

लगभग १०-११ वर्षके बाद इस ग्रन्थका यह दूसरा संस्करण प्रकाशित किया जाता है। अबकी बार इसके संशोधनमें पहलेकी अपेक्षा विशेष परिश्रम किया गया है। इतने पर भी यदि इसमें कुछ अशुद्धियाँ रह गई हों, तो उनके लिए पाठकगण हमें क्षमा करें।

—प्रकाशक।

ॐ

# कविवर भूधरदासजी विरचित-

# पार्श्वपुराण।

श्रीपार्श्वनाथजीकी स्तुति।

दोहा।

मोहमहातमदलन दिन, तपलछमीभरतार।
ते पारस परमेस मुझ, होहु सुमतिदातार ॥ १ ॥
वामानंदन-कलपतरु, जयो जगतहितकार।
मुनिजन जाकी आस करि, जाचैं सिवफल सार ॥ २ ॥

छप्पय।

भुवनतिलक भगवत, संतजन-कमल-दिवायर।
जगतजंतु-बंधव अनत, अनुपम गुणसायर ॥
राग-नाग-मयमंत,—दंत-उच्छेपन बालि अति।
रमाकंत अरहंत, अतुल जसवत जगतपति ॥
महिमा महंत मुनिजन जपत, आदि अंत सबको सरन
सो परमदेव मुझ मन बसो, पारसनाह मंगलकरन ॥ ३ ॥
विमलबोधदातार, विश्व-विद्या-परमेसर।
लछमीकमलकुमार, मार-मातग-मृगेसर ॥
सुखमयंक अवलोकि, रंक रजनीपति लाजै।

जय अस्वसेन-कुल-चंद्र जिन, सक्र-चक्र-पूजित-चरन ।
तारो अपार भवजलधितैं, तुम तरंड तारन-तरन ॥ ४ ॥

बाघ सिंह बस होहिं, विषम विषधर नहिं डंकैं ।
भूत प्रेत बेताल, ब्याल बैरी मन संकैं ॥
साकिनि डाकिनि अगनि, चोर नहिं भय उपजावैं ।
रोग सोग सब जाहिं, विपत नेरे नहिं आवैं ॥
श्रीपार्सदेवके पदकमल, हियैं धरत निज एकमन ।
छूटैं अनादि बंधन बँधे, कौन कथा विनसैं विघन ॥५॥

चहुंगति भ्रमत अनादि, वादि बहुकाल गमायौ ।
रही सदा सुख-आस,–प्यास, जल कहूं न पायौ ॥
सुखकरता जिनराज, आज लौं हियैं न आये ।
अब मुझ माथे भाग, चरन-चिंतामनि पाये ॥
राखौं संभाल उर कोपमैं, नहिं बिसरौं पल रंक-धन ।
परमादचोर टालन निमित, करौं पार्सजिनगुनकथन ॥६॥

चौपई ( १५ मात्रा ) ।

वंदौं तीर्थंकर चौबीस । बंदौं सिद्ध बसैं जगसीस ॥
वंदौं आचारज उवझाय । बंदौं परम साधुके पाय ॥ ७ ॥
ये ही पद पांचौं परमेठ । ये ही सांच और सब हेठ ॥
ये ही मंगल पूज्य अतीव । ये ही उत्तम सरन सदीव ॥ ८॥
वंदौं जिनवानी मन सोध । आदि अंत जो विगत-विरोध ॥

दोहा ।

बरतो जग जयवंत नित, जिनप्रवचन अमलान ।
लोक-महलमैं जगमगै, मानिक-दीप समान ॥ १० ॥
हरो भरम दारिद्र दुख, भरो हमारी आस ।
करो सारदा लच्छमी, मुझ उरअंबुज वास ॥ ११ ॥

चौपई ।

बंदौं वृषभसेन गनराज । गुरु गौतम भवजलधिजहाज ॥
कुंदकुंद-मुनि-प्रमुख सुपंथ। जे सब आचारज निरग्रंथ ॥१२॥
जैनतत्त्वके जाननहार । भये जथारथ कथक उदार ॥
तिनके चरनकमल कर जोरि। करौं प्रनाम मान-मद छोरि॥

दोहा ।

सकलपूज्य-पद पूजकै, अलपबुद्धिअनुसार ॥
भाषा पार्सपुरानकी, करौं स्वपरहितकार ॥ १४ ॥

चौपई ।

जिनगुनकथन अगमविस्तार। बुधिबल कौन लहै कवि पार।
जिनसेनादिक सूरि महंत। बरनन करि पायो नहिं अंत॥१५॥
तो अब अलपमती जन और। कौन गिनतिमैं तिनकी दौर॥
जो बहुभार गयद न बहै। सो क्यों दीन ससक निरवहै १६

दोहा ।

कह जानैं ते यों कहैं, हम कछु वरन्यौ नाहिं ॥
जे कह जानै ही नही, ते अब कहा कहाहि ॥ १७ ॥
नभ बिलस्त नापै नहीं, चुलू न सागर-तोय ॥

चौपई।

ये यह उत्तम नर अवतार। जिनचरचा बिन अफल असार॥
सुनि पुरान जा धुमैं न सीस। सो थोथे नारेल सरीस॥१९॥
जिनचरित्र जे सुनै न कान। देहगेहके छिद्र समान॥
जामुख जैनकथा नहि होय। जीभ भुजंगनिकौ बिल सोय२०
या प्रकार यह उद्यम जोग। कहत पुरानन पंडित लोग॥
जिनगुनगान सुधारसन्याय। सेवत अलप जनम-जुर जाय२१

घनाक्षरी।

जौ लौं कवि काव्यहेत आगमके अच्छरकौ,
अरथ विचारै तौलौं सिद्धि सुभध्यानकी।
और वह पाठ जब भूपर प्रगट होय,
पढ़ैं सुनैं जीव तिन्हैं प्रापति ह्वै ग्यानकी॥
ऐसैं निज-परकौ विचार हित हेतु हम,
उद्यम कियौ है नहि बान अभिमानकी।
ग्यानअंस चाखा भई ऐसी अभिलासा अब,
करूं जोरि भाखा जिनपारसपुरानकी॥ २२॥
आगैं जैनग्रंथनिके करता कवींद्र भये,
करी देवभाषा महाबुद्धिफल लीनो है।
अच्छरमिताई तथा अर्थकी गभीरताई,
पदललिताई जहा आई रीति तीनो है॥
कालके प्रभाव तिन ग्रंथनिके पाठी अब,
दीसत अलप ऐसो, आयो दिन हीनों है।

तातै इह समै जोग पढ़ैं बालबुद्धि लोग,
पारसपुरानपाठ भाषाबद्ध कीनो है ॥ २३ ॥

दोहा।

सक्तिभक्तिबल कविनपै, जिनगुन बरनैं जाहिं ॥
मैं अब बरनौं भक्तिवस, सक्ति मूल मुझ नाहिं ॥ २४ ॥
बरनौं पूरवकथितक्रम, ग्रंथअर्थ अवधारि।
सुगमरूप संछेपसौं, सुनौ सबहि नरनारि ॥ २५ ॥

चौपई।

मगधदेस देसनि-परधान । राजगृही नगरी सुभथान ॥
राज करै सेनिक भूपाल। नीतवत नृप पुन्यविसाल ॥ २६ ॥
छायक-सम्यकदरसनसार । रूप सील सबगुनआधार ॥
तिनके घर अतेवर घना। पटरानी रानी चेलना ॥ २७ ॥
जाके गुन बरनत बहु भाय। बिरिया लगै कथा बढ़ि जाय॥
एक दिना निज सभा नरेस। निवसै जैसै सुरग-सुरेस॥२८॥
रोमाचित बनपालक ताम। आय राय प्रति कियौ प्रनाम॥
छह रितुके फल फूल अनूप। आगैं धरे अनूपमरूप ॥ २९ ॥
हाथ जोरि बिनवै बनपाल । विपुलाचल पर्वतके भाल ॥
वर्द्धमान तीर्थंकर आप। आये राजन-पुन्यप्रताप ॥ ३० ॥
महिमा कछु बरनी नहिं जाय। इंद्रादिक सेवैं सब पाय ॥
समोसरनसपतिकी कथा। मोपै कही जाय किमि तथा ॥३१॥
माली वचन सुनैं सुखदाय । हरप्यौ राजा अंग न माय ॥

सात पैंड़ गिरिसम्मुख जाय । कियौ परोच्छविनय नरराय।
आनदभेरि नगरमैं दई । सवहीकौं दरसनरुचि भई ॥ ३३।
चल्यौ संग पुरजन समुदाय । वंदे वर्द्धमान जिनराय ।
लोकोत्तर लछमी अवलोक। गये सकल भूपतिके सोक ॥३४।
थुति आरंभ करी बहुभाय । बार बार भुवि सीस नवाय ।
गौतम गुरु पूजे कर जोरि। नरकोठैं वैठ्यौ मद छोरि ॥३५।
कियौ प्रस्न स्रेणिक बड़ भूप । प्रभु पारस निजकथा अनूप।
जाके सुनत पाप छय होय । कहिये देव कृपाकरि सोय ३६
तब गनधर बोले हितकाज । जोग प्रस्न कीनों नरराज ।
सुन पुनीत पारसजिनकथा । सफल होय मानुपभव जथा३७

दोहा ।

इहि विधि जो मगधेस प्रति, कह्यौ चरित गनराज ॥
ताही क्रम आये कहत, आचारज परकाज ॥ ३८ ॥
तिनहीके अनुसार अब, कहूँ किमपि विस्तार ॥
जैनकथा कलपित नहीं, यह जानौ निरधार ॥ ३९ ॥
जैनवचनवारिधि अगम, पानी अर्थ अनूप ॥
मतिभाजन भर भर लिये, यह जिनआगमरूप ॥ ४० ॥

इति पीठिका ।

# पहला अधिकार।

चौपई।

जंबूदीप दिपै इह सार। सूरजमडलकी उनहार॥
मध्य सुमेरुकर्णिकाभास। बने छेत्र दल दीरघ जास॥४१॥
तारागन मकरंद मनोग। सुरनरसंग भ्रमरकुलजोग॥
लवनसमुद्र सरोवरथान। दीप किधौं यह कमल महान ४२
लच्छ महा जोजन विस्तार। बसै विविध-रचना-आधार॥
दच्छिन भरत धनुप-संठान। पर्वत फणच नदीजुग बान॥४३॥
मानों सागरप्रति अनुमानि। तानत तीर छार-जल जानि॥
ऐसी भांति विराजत खेत। छहो खंडमंडित छवि देत।४४।
पांच मलेच्छ बसै तामाहि। धर्म कर्म कछु जानैं नाहिं॥
उत्तम आरजखंडमझार। देस सुरम्य बसै मनहार॥ ४५॥
जनकुल जहां रहैं बहु भांति। पास पास सोहैं पुर-पांति॥
सरवर नदी सैल उद्यान। वन उपवनसौं सोभामान॥४६॥
तहां नगर पोदनपुर नाम। मानों भूमितिलक अभिराम॥
देवलोककी उपमा धरै। सब ही विध देखत मनहरै॥४७॥

दोहा।

तुंग कोट खाई सजल, सघन बाग गृह-पांति॥
चौपथ चौक बजारसौं, सोहै पुर बहुभांति॥ ४८॥
ठाम ठाम गोपुर लसैं, वापी सरवर कूप॥
किधौं स्वर्गने भूमिकौं, भेजी भेंट अनूप॥ ४९॥

चौपई।

जैनी प्रजा जहां परवीन। बसै दानपूजाव्रतलीन॥
जैनभवन ऊंचे अति बने। सिखर धुजासौं सोभित वने॥५०॥
इहि विधि पुरसोभा अधिकार। वरनन करत लगै बहुवार॥
राज करै राजा अरविंद। सोहै मानों स्वर्ग सुरिंद॥ ५१॥
पालै प्रजा कुमति जिन दली। नीतिवेलमंडित भुजवली॥
दयाधाम सज्जन गंभीर। गुनरागी त्यागी रनधीर॥ ५२॥
तिस भूपतिकै विप्र सुजान। विस्वभूति मंत्री बुधिवान॥
ताकै तिया अनूदरि सती। रूपसील-गुन-लच्छनवती॥५३॥
दोय पुत्र तिनकैं अवतरे। पापपुन्यकी पटतर धरे॥
जेठो नंदन कमठ कुपूत। दूजो पुत्र सुधी मरुभूत॥ ५४॥

दोहा।

जेठो मतिहेठो कुटिल, लघुसुत सरल सुभाय॥
विप अम्रत उपजे जुगल, विप्र जलाधिके जाय॥ ५५॥
बडे पुत्रने भारजा, व्याही बरुना नाम॥
लघुने वरी विसुन्दरी, रूपवती अभिराम॥ ५६॥

चौपई।

यो सुख निवसैं बाधव दोय। निज निज टेव न टारैं कोय॥
वक्र चाल विपधर नहिं तजै। हंस वक्रता भूल न भजै॥५७॥

दोहा।

उपजे एकहि गर्भसौं, सज्जन दुर्जन येह॥
लोह-कवच रच्छा करै, खांडो खंडै देह॥ ५८॥

चौपई।

अति सज्जन मरुभूति कुमार। नीति-सास्त्रको जाननहार॥
सबकौं इष्ट सकलगुनगेह। राजा प्रजा करैं सब नेह॥५९॥
एक दिना भूपति-मंत्रीस। सेत बाल देख्यौ निज सीस॥
उपज्यौ विप्र-हियैं वैराग। जान्यौ सब जग अथिर सुहाग ६०

दोहा।

जरा मौतकी लघु बहिन, यामैं ससै नाहि॥
तौ भी सुहित न चितवैं, बड़ी भूल जगमाहिं॥ ६१॥

चौपई।

यह विचार मंत्री मनमाहिं। निज सुत सौंपि रायकी बांहि॥
सुगुरु-साखि जिन-चारित लियौ। वनोवास आतमहित कियौ
अब मरुभूति विप्र सुख करै। अहनिस नीतिपंथ पग धरै॥
राजा प्रीति करै बहु भाय। सोमप्रकृति सबकौं सुखदाय॥६३॥
एक समय आपन अरविंद। मंत्री सेनासहित नरिंद॥
राय वज्रवीरजपर चढ़े। क्रोधभाव उरमैं अति बढ़े॥ ६४॥
पीछे कमठ निरकुश होय। लग्यौ अनीति करन सठ सोय॥
जो मन आवै सो हठ गहै। 'मैं राजा' सबसौं इम कहै॥६५॥
एक दिना निजभ्रातानारि। भूपन भूपितरूप निहारि॥
रागअंध अति विहवल भयौ। तीच्छन कामताप उर तयौ६६
महा मलिन उर बसैं कुभाव। दुर्गतिगामी जीव सुभाव॥
पुत्री सम लघुभ्रातानारि। तहा कुदिष्ट धरी अविचारि ६७

दोहा ।

पाप कर्मकौ डर नहीं, नहीं लोककी लाज ॥
कामी जनकी रीति यह, धिक तिस जन्म अकाज ॥ ६८ ॥
कामी काज अकाजमैं, हो हैं अंध अवेव ॥
मदनमत्त मदमत्त सम, जरो जरो यह टेव ॥ ६९ ॥
पिता नीर परसै नहीं, दूर रहै रवि यार ॥
ता अंबुजमैं मूढ अलि, उरझि मरै अविचार ॥ ७० ॥
त्यों ही कुविसनरत पुरुष, होय अवस अविवेक ॥
हितअनहित सोचै नहीं, हियैं विसनकी टेक ॥ ७१ ॥

चौपई ।

बनमैं सघन लतागृह जहां । गयौ कमठ कामातुर तहां ॥
बढी वेदना कल नहिं परै । छिन छिन काम-विथा दुख करै॥
कमठ सखा कलहंस विसेख । पूछत भयौ दुखी तिह देख ॥
कौन व्याधि उपजी तुम अंग। अतिव्याकुल दीखत सरवंग ॥
तब तिन लाज छोरि सब सही । मनकी बात मित्रसौं कही॥
सुनि कलहंस कथा विपरीति। सिच्छावचन कहे करि प्रीति॥
अति अजोग कारज इह बीर । सो तुम चिंत्यौ साहस-धीर॥
परनारीसम पाप न आन । परभवदुख इह भव जस-हान ७५
इस ही बंछासौं अघ भरे । रावण आदि नरकमैं परे ॥
जगमैं जेठ पितासमतूल । बात कहत लाजै नहिं मूल ७६
तातैं यह हठ भूल न करौ । सुहित सीख मेरी मन धरौ ॥
लोकनिंद कारज यह जान । धर्मनिंद निहचै उर आन ७७

दोहा।

यों कलहंस अनेक विध, दई सीख सुखदैन ॥
ते सब कमठकुसीलप्रति, भये विफल हितवैन ॥ ७८ ॥
आयुहीन नरकौं जथा, ओषधि लगै न लेस ॥
त्यों ही रागी पुरुष प्रति, वृथा धरम-उपदेस ॥ ७९ ॥
बोल्यौ तब कामी कमठ, सुनो मित्र निरधार ॥
जो नहिं मिलै विसुंदरी, तो मुझ मरन विचार ॥ ८० ॥
देख कमठकी अधिक हठ, कुमति करी कलहस ॥
जाय कहे ता नारिसौं, झूठ वचन अपसस ॥ ८१ ॥

अडिल्ल छंद।

सुन विसुंदरी आज कमठ वनमैं दुखी।
तू ताकी सुध लेहु होय जिहि विधि सुखी ॥
सुनते ही सतभाव गई वनमैं तहां।
निवसै कर परपंच कमठ कपटी जहां ॥ ८२ ॥

दोहा।

छलबल कर भीतर लई, वनिता गई अजान।
राग वचन भाखे विविध, दुराचारकी खान ॥ ८३ ॥

चाल छंद।

गजमातो कमठ कलंकी। अवसौं मनसा नहि संकी।
भावज वन-करनी रंजो। निज सीलतरोवर भंजो ॥ ८४ ॥
रिपु जीत विजयजस पायौ। अरविंद नृपति घर आयौ ॥
जे कर्म कमठने कीनैं। राजा सब ते सुन लीनैं ॥ ८५ ॥

मंत्री मरुभूति बुलायौ। ताकौं सब भेद सुनायौ ॥
कहु विप्र सुधी क्या कीजे। क्या दंड इसै अब दीजे॥८६॥
दुज कहै सरल परिनामी। अपराध छिमा कर स्वामी॥
जो एक दोष सुन लीजे। ताकौं प्रभु दंड न दीजे ॥ ८७ ॥
तब भूप कहै सुन भाई। जो निग्रहजोग अन्याई ॥
तापै करुना किम होहै। यह न्याय नृपति नहिं सोहै ॥८८॥
तातैं गृह गच्छ सयाने। मत खेद हियैं कछु आने ॥
ऐसैं कह विप्र पठायौ। तिस पीछैं कमठ बुलायौ ॥ ८९ ॥
अति निंदो नीच कुकर्मी। जानो निरधार अधर्मी ॥
राजा अति ही रिस कीनौं। सिर मुंड दंड बहु दीनौं ॥९०॥
मुखकै कालोंस लगाई। खर रोप्यौ पीर न आई ॥
फिर सारे नगर फिरायौ। प्रति बीथी ढोल बजायौ ॥९१॥
इस भांति कमठकी ख्वारी। देखै सब ही नर नारी ॥
पुरवासी लोक धिकारैं। बालक मिलि कंकर मारैं ॥ ९२ ॥
यों दंड दियौ अति भारी। फिर दीनौं देश निकारी ॥
जो दीरघ पाप कमाये। ततकाल उदै बहु आये ॥ ९३ ॥

दोहा।

इहि विधि फूल्यौ पाप तरु, देख्यौ सब संसार ॥
आगे फलहै नरक फल, धिक दुर्विसन असार ॥ ९४ ॥

चौपई।

महादंड भूपति जब दयौ। कमठ कुसील दुखी अति भयौ॥
बिलखत वदन गयौ चल तहां। भूताचलपर्वत है जहां ९५

रहे तहां तपसी-समुदाय। ग्यानविना सब सोखै काय ॥
केई रहे अधोमुख झूल। धूंआं पान करैं अघमूल ॥ ९६ ॥
केई ऊरधमुखी अघोर। देखैं सवै गगनकी ओर ॥
केई निवसैं ऊरध बाहिं। दुविध दयासौ परचै नाहिं ॥९७॥
केई पंच अगनि झल सहैं। केईं सदा मौनमुख रहै ॥
केई बैठे भसम चढ़ाय। केई मृगछाला तन लाय ॥ ९८ ॥
नख बढ़ाय केई दुख भरैं। केई जटा-भार सिर धरैं ॥
यो अग्यान तपलीन मलीन। करैं खेद परमारथहीन ॥९९॥
तिनमैं एक तापसीनाथ। प्रनम्यौ ताहि धरे सिर हाथ ॥
तिन असीस दे आदर कियौ।दिच्छादान कमठ तहँ लियौ१००
करन लग्यौ तब कायकलेस। उर वैराग विवेक न लेस ॥
ठाढ़ो भयौ सिला कर लिये। किधौं फनी फन ऊंचो किये
मंत्री बंधवकी सुधि पाय। राजासौं विनयो इमि आय ॥
भूताचलपर्वतकी ओर। भ्राता कमठ करै तप घोर ॥१०२॥
जो नरनायक आग्या होय। देखूं जाय सहोदर सोय ॥
पूछै नृपति कौन तप करै। भो प्रभु तापसके व्रत धरै॥१०३
एक बार मिलि आऊं ताहि। राय कहै मंत्री मत जाहि ॥
खलसौं मिले कहा सुख होय। विषधर भेंटे लाभ न कोय १०४
बरजौ रह्यौ न बारंबार। महा सरलचित विप्रकुमार ॥
भ्रातमोहबस उद्यम कियौ। कोमल होत सुजनको हियौ १०५

दोहा।

दुर्जनदूषित संतकौ, सरल सुभाव न जाय ॥
दर्पणकी छवि छारसौं, अधिकाहि उज्जल थाय ॥ १०६ ॥

सज्जन टरै न टेवसौं, जो दुर्जन दुख देय ॥
चंदन कटत कुठारमुख, अवसि सुवास करेय ॥ १०७ ॥

चौपई ।

गयो विप्र एकाकी तहां । कमठ कठोर करै तप जहां ॥
विनयवंत हो विनयो तास । महा सरलवायक मुख भास ॥
भो बंधव तो उर गंभीर । यह अपराध छिमा कर वीर ॥
मैं तो राय बहुत वीनयो । मानी नाहिं तुमैं दुख दयो १०९
होनहारसौं कहा वसाय । तुम विन मोहि कछू न सुहाय ॥
यों कह पांयन लाग्यौ जाम । कोप्यौ अधिक कमठ दुठ ताम ॥

दोहा ।

दुर्जन और सलेखमा, ये समान जगमाहिं ॥
ज्यों ज्यों मधुरो दीजिये, त्यों त्यों कोप कराहिं ॥१११॥
सिला सहोदर सीसपै, डारी वज्र समान ॥
पीर न आई पिसुनकौं, धिक दुर्जनकी बान ॥ ११२ ॥
दुर्जनको विस्वास जे, करि हैं नर अविचार ॥
ते मंत्री मरुभूति सम, दुख पावैं निरधार ॥ ११३ ॥
दुर्जन जनकी प्रीतसौं, कहो कैसे सुख होय ॥
विषधर पोषि पियूषकी, प्रापति सुनी न लोय ॥ ११४ ॥
मंत्रीतनतैं रुधिरकी, उछली छींट कराल ॥
दुर्जनहिततरुतै किधौं, निकसी कोंपल लाल ॥ ११५ ॥
इहिविधि पापी कमठने, हत्या करी महान ॥
तब तपसी मिलि नीच नर, काढ़ दियौ दुठ जान ॥११६॥

चौपई।

फेरि दुष्ट भीलनतैं मिल्यो। भयो चोर घर मूसन हिल्यौ॥
पाप करत कर आयो जबै। बांधि बुरी विधि मार्यौ तबै॥

दोहा।

जैसी करनी आचरै, तैसो ही फल होय॥
इन्द्रायनकी बेलिकै, आंब न लागै कोय॥ ११८॥

चौपई।

एक दिना अरविंद नरिंद। पूछे कर जुग जोरि मुनिंद॥
भो प्रभु मुझ मंत्री मरुभूत। क्यो नहिं आयौ ब्राह्मनपूत ११९
यह सुनि अवधिवत मुनिराय। सब बिरतंत कह्यौ समुझाय॥
राजा मन अति भयौ मलीन। हा मंत्री सज्जनतालीन १२०
बरजत गयौ दुष्टके पास। कुमरन लह्यौ सह्यौ बहु त्रास॥
होनहार सोई विधि होय। ताहि मिटाय सकै नहि कोय।१२१।
यों विचारि मन सोक मिटाय। साधु पूजि घर आये राय॥
यह सुनि दुष्टसंग परिहरो। सुखदायक सतसंगति करो॥१२२॥

छप्पय।

तपे तवापर आय, स्वातिजलबूंद विनट्ठी।
कमलपत्रपरसंग, वही मोतीसम दिट्ठी॥
सागरसीप समीप, भयो मुक्ताफल सोई।
संगतको परभाव, प्रगट देखो सब कोई॥
यों नीचसंगतैं नीचफल, मध्यमतैं मध्यम सही॥
उत्तमसँजोगतैं जीवको, उत्तमफलप्रापति कही॥ १२३॥

इतिश्रीपार्श्वपुराणभाषायां मरुभूतिभववर्णनं नाम प्रथमोऽधिकारः॥ १॥

# दूसरा अधिकार।

दोहा।

अस्वसेनकुलचंद्रमा, वामाउरअवतार॥
वंदौं पारसपदकमल, भविजनअलि आधार॥ १॥

पद्धरी छंद।

इसभांति तजे मरुभूमि प्रान। अब सुनो कथा आगे सुजान॥
अतिसघन सल्लकी बन विशाल। जहं तरुवर तुंग तमाल ताल॥
बहु बेलजाल छाये निकुज। कहिं सूखि परे तिन पत्रपुंज॥
कहिं सिकताथल कहिं सुद्ध भूमि। कहिं कपि तरुडारन रहे झूमि
कहि सजलथान कहिं गिरि उतंग। कहिं रीछ रोज विचरैं कुरंग
तिस थानक आरतध्यानदोप। उपज्यौ वनहस्ती वज्रघोप॥
अति उन्नत मस्तकसिखर जास। मद-जीवनझरना झरहिं तास
दीसै तमवरन विसाल देह। मनों गिरिजंगम दूसरो येह॥५॥
जाको तन नख शिख छोमवत। मुसलोपम दीरघ धवल दंत॥
मदभीजे झलकैं जुगल गंड। छिन छिनसौं फेरै सुंड दंड॥६॥
जो वरुना नामैं कमठ नार। पोदनपुर निवसै निराधार॥
सो मरि तिहि हथिनी हुई आन। तिससंग रमै नित रंजमान॥
कवही बहु खंडे बिरछबेलि। कवही रजरंजित करहि केलि
कवही सरवरमैं तिरहि जाय। कवही जल छिरकै मत्तकाय॥
कवही सुख पंकज तोरि देय। कवही दह-कादो अंग लेय॥९॥

दोहा।

यों सुछंद क्रीड़ा करै, वरुना-हथिनी सत्थ।
बन निवसै वारण बली, मारण-सील समत्थ॥ १०॥

चौपाई।

एक दिवस अरविंद नरेस। ज्यो विमानमैं स्वर्ग सुरेस॥
यो निजमहलन निवसै भूप। देख्यौ बादल एक अनूप॥११॥
तुंग सिखर अति उज्जल महा। मानो मंदिर ही बनि रहा॥
नरवै निरखि चिंतवै ताम। ऐसो ही करिये जिनधाम॥१२॥
लिखनहेत कागद कर लयौ। इतने सो सरूप मिटि गयौ॥
तब भूपति उर करै विचार। जगतरीति सब अथिर असार१३
तन धन राज संपदा सबै। यो ही विनासि जायगी अबै॥
मोहमत्त प्रानी हठ गहै। अथिर वस्तुकों थिर सरदहै॥१४॥
जो पररूप पदारथजाति। ते अपने मानै दिनराति॥
भोगभाव सब दुखके हेत। तिनहीकौं जानै सुखखेत॥१५॥
ज्यों माचन-कोदो परभाव। जाय जथारथ दिष्टि स्वभाव॥
समझै पुरुष औरकी और। त्यों ही जगजीवनकी दौर॥१६॥
पुत्र कलत्र मित्रजन जेह। स्वारथ लगे सगे सब एह॥
सुपनसरूप सकल संभोग। निजहितहेत विलंब न जोग १७
यो भूपति वैराग विचारि। डारी पोट परिग्रह भारि॥
राजसमाज पुत्रकौं दियौ। सुगुरुसाखि नृप चारित लियौ १८
धरी दिगंबरमुद्रा सार। करै उचित आहार विहार॥
बारहविध दुद्धर तपलीन। छहोंकायपीहर परवीन॥ १९॥

एकसमय अरविंद मुनीस । सारथवाहीके संग ईस ॥
सिखर सुमेरु बंदनाहेत । चले ईरज्यापथ पग देत ॥ २० ॥
गये सल्लकी वनमैं लंघ । तहां जाय उतर्‌यौ सव संघ ॥
निजसिज्झायसमय मन लाय। प्रतिमाजोग दियौ मुनिराय२१
तावत वज्रघोष गजराज । आयौ कोपि कालसम गाज ॥
सकलसंगमैं खलबल परी । भाजे लोग कीकि धुनि करी२२
गजके धकै पर्‌यो जो कोय । सो प्रानी पहुँच्यौ परलोय ॥
मारे तुरग तिसाये गैल । मारे मारगहारे बैल ॥ २३ ॥
मारे भूखे करहा खरे । मारे जन भाजे भय भरे ॥
इहिविध हाथी करत सँघार । मुनि सनमुख आयौ किलकार
अति विकराल रोषविष भरौ । मुनि मारनकौ उद्यम करौ ॥
साधु सुदर्सन मेरु समान । सिरीवच्छ लच्छन उर थान २५
सो सुचिन्ह गज देख्यौ जाम । जाती-सुमरन उपज्यौ ताम॥
ततखिन सांत भयौ गजईस। मुनिके चरन धर्‌यौ निज सीस ॥
तब मुनि चवै मधुर धुनि महा। रे गयंद यह कीनौं कहा ॥
हिंसा करम परम अघहेत । हिसा दुरगतिके दुख देत ॥ २७॥
हिंसासौं भमिये संसार । हिंसा निजपरकौं दुखकार ॥
तैं ये जीव विधुंसे आय । पातकतैं न डर्‌यौ गजराय॥ २८॥
देखि देखि अघके फल कौन । लई विप्रतैं कुंजर-जौन ॥
तू मंत्री मरुभूति सुजान। मैं अरविंद क्यों न पहिचान॥ २९॥
धर्मविमुख आरतके दोष । पसु-परजाय लई दुखकोष ॥
अब गजपति ये भाव निवारि। धर्मभावना हिरदैं धारि ३०

सम्यकदरसन-पूरव जान। पालि अनुव्रत जब लौं प्रान ॥
सुन करिंद उर कोमल थयौ। किये पाप निज निंदत भयौ २१

दोहा।

फिर गुरु-पॉयन सिर धर्यौ, धर्म गहन उर हेत ॥
तब सत्यारथ धर्मविधि, कही साधु समचेत ॥ ३२ ॥

चौपई।

सुन हस्ती सासनअनुकूल। सकल धरमकौ दर्सन मूल ॥
सब गुनरत्नकोप यह जान। मुक्ति-धौरहर-धुर-सोपान ३३
तातैं यह सबहीकौ सार। या विन सब आचरन असार ॥
जो सरदहै औरकी और। सो मिथ्यातभावकी दौर ॥ ३४॥
दोप अठारह-वरजित देव। दुविधसगत्यागी गुरु एव ॥
हिंसावरजित धरम अनूप। यह सरधा समकितकौ रूप ३५

दोहा।

संकादिक दूपन बिना, आठों अंग समेत।
मोख-विरछ-अंकूर यह, उपजे भवि-उर-खेत ॥ ३६ ॥

चौपई।

अगहीन दरसन जगमाहिं। भवदुखमेटन समरथ नाहिं ॥
अच्छरऊनमत्र जो होय। विषवाधा मेटै नहि सोय ॥ ३७॥
तातैं यह निरनय उरआन। यह हिरदै सम्यक सरधान ॥
पंच उदंबर तीन मकार। इनकौं तजि बारह व्रत धार ३८
इहि विध गुरु दीनौं उपदेस। वारण हरपित भयौ विसेस
सुगुरुवचन सब हिरदै धरे। सम्यकपूरब व्रत आदरे ॥ ३९ ॥

बार बार भुविसौं सिर लाय । मुनिवर चरन नमै गजराज ॥
चले साधु तिहिं हित उपजाय । तब हाथी आयौ पहुँचाय

दोहा।

करि उपगार मुनीस तहँ, कीनौं सुविधि विहार ।
वन निवसै गजपति व्रती, सुगुरु सीख उर धार ॥ ४१ ॥

चालछंद ।

अब हस्ती संजम साधै । त्रसजीव न भूलि विराधैं ॥
समभाव छिमा उर आनै । अरि मित्र बराबर जानै ॥ ४२ ॥
काया कसि इंद्री दंडै । साहस धरि प्रोषध मंडै ॥
सूखे तृन पल्लव भच्छै । परमर्दित मारग गच्छै ॥ ४३ ॥
हाथीगन डोह्यौ पानी । सो पीवै गजपति ग्यानी ॥
देखे बिन पांव न राखै । तन पानी पंक न नाखै ॥ ४४ ॥
निजसील कभी नहिं खोवै । हथिनीदिस भूलि न जोवैं ॥
उपसर्ग सहै अति भारी । दुरध्यान तजै दुखकारी ॥ ४५ ॥
अघके भय अंग न हालै । दिढ़ धीर प्रतिग्या पालै ॥
चिरलौं दुद्धर तप कीनौं । बलहीन भयौ तन छीनौं ॥४६॥
परमेठि परमपद ध्यावै । ऐसैं गज काल गमावै ॥
एकै दिन अधिक तिसायौ । तब वेगवती तट आयौ ॥४७॥
जल पीवन उद्यम कीधौ । कादो द्रह कुंजर बीधौ ॥
निहचै जब मरन विचारौ । संन्यास सुधी तब धारौ ॥४८॥
सो कमठ कलंकी मूवो । ता बन कुरकट अहि हूवो ॥
तिन आय डस्यौ गज ग्याता । यह वैर महादुखदाता॥४९॥

दोहा।

मरन करयौ गजराज तब, राखे निर्मल भाव ॥
सुरग बारवैं सुर भयौ, देखौ धर्मप्रभाव ॥ ५० ॥

चौपई।

तहां स्वयंप्रभ नाम विमान। ससिप्रभदेव भयौ तिहिं थान ॥
अवधि जोड़ सब जान्यौ देव। व्रतकौ फल पूरबभव भेव ॥
जिनसासन संसौ बहुभाय। धर्मविषै दिढता मन लाय ॥
सदा सासते श्रीजिनधाम। पूजा करी तहां अभिराम ॥५२॥
महामेरु नंदीसुर आदि। पूजे तहां जिनबिंब अनादि ॥
कल्यानक-पूजा विस्तरै। पुन्यभंडार देव यो भरै ॥ ५३ ॥
सोलह सागर आयु प्रमान। साढ़े तीन हाथ तन जान ॥
सोलह सहस वर्ष जब जाहिं। असन-चाह उपजै उरमाहिं
अनुपम अम्रतमय आहार। मनसौ भुंजै देवकुमार ॥
आठदुगुन पख बीतैं जास। तब सो लेय सुगध उसास ५५
अवधि चतुर्थ अवनि परजंत। यही विक्रियाबल विरतंत ॥
अवधिछेत्र जावत परमान। होय विक्रिया तावत मान ५६

दोहा।

वदनचंद्र उपमा धरै, विकसित वारिज नैन।
अंग अंग भूषन लसैं, सब बानक सुखदैन ॥ ५७ ॥
सुंदर तन सुंदर वचन, सुदर स्वर्गनिवास ॥
सुंदर वनितामंडली, सुंदर सुरगन दास ॥ ५८ ॥
अनिमा महिमा आदि दे, आठ रिद्धि फल पाय ॥
सुर सुछंदक्रीडा करै, जो मन वरतै आय ॥ ५९ ॥

सुनत गीत संगीत-धुनि, निरखत निरत रसाल ॥
सुखसागरमैं मगन सुर, जात न जानै काल ॥ ६० ॥
लोकोत्तम सब संपदा, अनुपम इंद्रीभोग ॥
सुफल फल्यौ तपकल्पतरु, मिल्यौ सकल सुखजोग ॥६१॥
जैवंतो बरतो सदा, जैनधर्म जगमाहिं ॥
जाके सेवत दुखसमुद, पसुपछी तिर जाहिं ॥ ६२ ॥

छंद ।

इसही जंबूदीप, पूर्वविदेहमझारै ।
पुहकलावती देस, विकसत नैन निहारै ॥ ६३ ॥
तहां विजयारध नाम, सोहै सैल रवानो ।
उज्जल वरन विसाल, रूपमई गिरिरानो ॥ ६४ ॥
जोजन परम पचास, भूमिविसै चौड़ाई ॥
तुंग पचीस प्रमान, सोभा कही न जाई ॥ ६५ ॥
चौथाई भूमांझ, नौ सिर कूट विराजैं ।
सिद्धासिखर जिनधाम, मनिप्रतिमा तहां छाजैं ॥ ६६ ॥
उत्तर दच्छिन ओर, श्रेणी दोय जहां हैं ।
दोय गुफा गिरि हेठ, अति अंधियार तहां हैं ॥ ६७ ॥
तापर स्वर्ग समान, लोकोत्तम पुर सोहै ।
वापी-कूप-तलाव,-मंडित सुर मनमोहै ॥ ६८ ॥
विद्युतगति भूपाल, न्याय प्रजा प्रतिपालै ।
नीतिनिपुन धर्मज्ञ, संत सुमारग चालै ॥ ६९ ॥

विद्युतमाला नांव, ता घर नारि सयानी।
मानौं मनमथ जोग, आय मिली रतिरानी ॥ ७० ॥
तिनकै सो सुर आय, पुत्र भयौ बडभागी।
अगनिवेग तसु नाम, अति सुंदर सौभागी ॥ ७१ ॥
सोमप्रकृति परवीन, सकलसुलच्छनधारी।
जिनपदभक्ति पुनीत, सबहीकौं सुखकारी ॥ ७२ ॥
राजसंपदा भोग, भुंजत पुन्यनियोगै।
एक दिना इन साधु, भैंटे भाग संजोगै ॥ ७३ ॥
स्रवन सुन्यौ उपदेस, भर जोबन वैराग्यौ।
आसन भव्य कुमार, संजमसौं अनुराग्यौ ॥ ७४ ॥
तजि परिग्रह गुरुसाख, पंचमहाव्रत लीनैं।
दुद्धर तप आराध, रागादिक कृस कीनैं ॥ ७५ ॥
छीन किये परमाद, विचरैं एकविहारी।
बारह अंग समुद्र, पार भयौ स्रुतधारी ॥ ७६ ॥
एक दिवस धरि जोग, हिमगिरिकंदरमाहीं।
निवसै आतमलीन, बाहरकी सुधि नाहीं ॥ ७७ ॥

दोहा।

कुरकट नामा कमठचर, दुष्टनाग दुखदाय।
सो मरि पंचम नरकमैं, पर्यौ पापवस जाय ॥ ७८ ॥
छेदन भेदन आदि बहु, तहां वेदना घोर।
सहस जीभसौं बरनिये, तऊ न आवै ओर ॥ ७९ ॥

ऐसे दुखमैं कमठ जिय, कीनी पूरन आव।
सत्रह सागर भुगतकै, निकस्यौ कूरसुभाव ॥ ८० ॥

चौपई।

वैर भाव उरतैं नहि टर्यौ। फेरि आय अजगर अवतर्यौ ॥
संसकारवस आयौ तहां। हिमगिरिगुफा मुनीसुर जहां ॥८१॥
गिले साधु संजमधर धीर। समभावनतैं तज्यौ सरीर ॥
लीनौं स्वर्गसोलवैं वास। जो नितनिरुपमभोगनिवास ॥८२॥
जन्म-सेजतैं जोवन पाय। उठ्यौ अमर संपूरन काय ॥
देखि संपदा विसमय भयौ। अवधि होत ससै सव गयौ ॥ ८३ ॥
पूजा करी जिनालय जाय। भक्ति-भाव-रोमांचित काय ॥
पूरवसंचित पुन्यसंजोग। करै तहां सुर वांछित भोग ॥८४॥
गये वरस वाईस हजार। भोजन भुंजै मनसाहार ॥
तावतमान पच्छ जब जाय। तव ऊसांसौं दिसिमहकाय॥८५॥
देखै पंचम भूपरजंत। अवधिग्यानबल मूरतिवंत ॥
तितनैं मान विक्रिया करै। गमनागमन हियैं जव धरै ॥८६॥
तीन हाथ अति सुंदर काय। लेस्या सुकल महा सुखदाय ॥
थिति सागर वाईस विसाल। इहिविध वीतै सुखमै काल ॥

दोहा।

आदि अंत जिस धर्मसौं, सुखी होय सब जीव।
ताकौं तनमनवचनकरि, हे नर सेव सदीव ॥ ८८ ॥

इतिश्रीमत्पार्श्वनाथपुराणभाषायां गजस्वर्गगमनविद्याधरभवविद्युत्प्रभदेव-
भववर्णन नाम द्वितीयोऽधिकार ॥ २ ॥

# तीसरा अधिकार



दोहा ।

अस्वसेनकुलकमलरवि, वामाकुँवर कृपाल ।
बंदौं पारसचरनजुग, सरनागत-प्रतिपाल ॥ १ ॥

चौपई ।

जबूदीप बसै चहुफेर । जाके मध्य सुदर्सन मेर ।
कंचनमनिमय अतुलसुहाग । ता पर्वतके पच्छिम भाग ।
अपरविदेह विराजै खेत । सो नित चौथेकालसमेत ॥
पद्पद जहां दिपैं जिनधाम । नही कुदेवनकौ विसराम॥३॥
जैनजतीजन दीखैं सोय । नहीं कुलिगी दीखै कोय।
उत्तमधर्म सदा थिर रहै। हिंसाधर्म प्रकास न लहै ॥ ४ ॥
तीनौं वरन बसैं जहां लोय । ब्राह्मनवरन कभी नहि होय।
तामैं पद्मदेस अभिराम । सोहै नगर अस्वपुरनाम ॥ ५ ॥
तहां वज्रवीरज भूपाल । न्यायै प्रजा करै प्रतिपाल ॥
गुननिवास सूरजसम दिपै । आन भूप उडगनछवि छिपै ६
विजया नामैं नरपति-नारि । रूपवंत रतिकी उनहारि ॥
पटरानी सबमैं परधान, पूरबपुन्यउदय गुणखान ॥ ७ ॥
एक समय निसिपच्छिमजाम । पच सुपन देखे अभिराम।
मेरु दिवाकर-चंद्र-विमान । सजलसरोवर सिंधुसमान ॥८॥
प्रात भये आई पियपास । विकसत लोचन हियें हुलास ॥
रातसुपन अवलोके जेह । नृप आगै परकासे तेह ॥ ९ ॥

तब नरिन्द बोले बिहसाय। सुंदर वचन स्रवन-सुखदाय ॥
सुनि रानी इनकौ फल जोय। पुत्र प्रधान तिहारे होय १०
ऐसे वच पियके अवधारि। अति आनंद भयौ नृपनारि।
अचुत स्वर्गतैं सो सुर चयौ। वज्रनाभि नामा सुत भयौ ११
चौसठ लच्छन लच्छित काय। पुन्यजोग जिमि उतर्यौ आय
जनममहोच्छव राजा कियौ। जिन पूजे जाचक धन दियौ॥
बढ़े बाल जिमि बालक-चंद। सुजनलोकलोचनसुखकंद ॥
क्रमक्रमसौं सिसु भयौ कुमार। पढ़ लीनी विद्या सब सार
जोबनवंत कुमर जब भयौ। निर्मल नीतिपंथ पग ठयौ ॥
रूप-तेज-बल-बुद्धि-विग्यान। सकल सारगुनरत्ननिधान १४
कीनी पिता ब्याहविधि जोग। राजसुता बहु बरीं मनोग॥
क्रमकरि कुमर पितापद पाय। राज करै थुति करिय न जाय
पुन्यजोग आयुधगृह जहां। चक्ररतन वर उपज्यौ तहां ॥
छहोंखंडवरती भूपाल। वस कीनैं नाये निजभाल ॥ १६ ॥
देव दैत्य विद्याधर नये। नृप मलेच्छ सब सेवक भये ॥
बढ़ी सपदा पुन्यसँजोग। इन्द्रसमान करै सुखभोग ॥ १७॥

दोहा।

संपूरन सुख भोगवै, वज्रनाभि चक्रेस।
तिस विभूतिबल बरनऊं, जथासकति लवलेस ॥ १८॥

चौपई।

सहस बतीस सासते देस। धनकनकंचन भरे विसेस ॥
विपुल बाढ़ बेढे चहुंओर। ते सब गांव छानवै कोर ॥१९॥

कोट कोट दरवाजे चार। ऐसे पुर छब्बीसहजार ॥
जिनकौं लगैं पांचसौं गांव। ते अटंब चउ सहस सुठांव २०
पर्वत और नदीके पेट। सोलह सहस कहे वे खेट ॥
कर्वट नाम सहस चौवीस। केवल गिरिवर बेढ़े दीप ॥२१॥
पत्तन अड़तालीस हजार। रतन जहां उपजैं अति सार ॥
एकलाख द्रोणीमुख वीर। सहस घाट सागरके तीर ॥ २२ ॥
गिरि ऊपर संबाहन जान। चौदह सहस मनोहर थान ॥
अट्ठाईस हजार असेस। दुर्ग जहां रिपुकौ न प्रवेस ॥ २३ ॥
उपसमुद्रके मध्य महान। अंतरदीप छपन परिमान ॥
रतनाकर छब्बीस हजार। वहु विध सार वस्तुभंडार ॥ २४ ॥
रतनकुच्छ सुंदर सातसै। रतनधरा थानक जहँ लसै ॥
इन पुरसौं वस राजैं खरे। जैनधाम धरनी जनभरे ॥ २५ ॥
वर गयद चौरासीलाख। इतने ही रथ आगम-साख ॥
तेज तुरंग अठारह कोर। जे बढ़ चलैं पवनतै जोर ॥ २६ ॥
पुनि चौरासी कोटि प्रमान। पायक संघ बडे बलवान ॥
सहस छानवै वनिता गेह। तिनकौ अब विवरन सुन लेह २७
आरजखंड बसैं नरईस। तिनकी कन्या सहस बतीस ॥
इतनी हीं अतिरूप रसाल। विद्याधरपुत्री गुनमाल ॥२८॥
पुनि मलेच्छ भूपनकी जान। राजकुमारी तावतमान ॥
नाटकिगन बत्तीस हजार। चक्री नृपकौं सुखदातार ॥ २९ ॥
आदि सरीर आदि सठान। पूर्वकथित तन लच्छन जान ॥
वहुविध विंजनसहित मनोग। हेमवरन तन सहजनिरोग ३०

छहो खंड भूपति बलरास । तिनसौं अधिक देहबल जास ॥
सहस बतीस चरनतल रमैं । मुकटबंधराजा नित नमैं ॥ २१ ॥
भूप मलेच्छ छोरि अभिमान । सहस अठारह मानैं आन ॥
पुनि गनबद्ध बखानैं देव । सोलह सहस करैं नृप सेव ॥२२
कोटि थाल कंचननिर्मान । लाखकोटि हलसहित किसान॥
नाना बरन गऊकुल भरे । तीनकोटि ब्रज आगम धरे ॥२३

दोहा ।

अब नवनिधिके नाम गुन, सुनौ जथारथरूप ।
जैनी बिन जानै नहीं, जिनकौ सहज सरूप ॥ २४ ॥

चौपई ।

प्रथम कालनिधि सुभ आकार । सो अनेक पुस्तकदातार ॥
महाकालनिधि दूजी कही । याकी महिमा सुनियौ सही २५
असि मसि आदिक साधन जोग । सामग्री सब देय मनोग ॥
तीजी निधि नैसर्प महान । नाना विध भाजनकी खान ॥
पांडुक नाम चतुरथी होय । सब्र रसधान समप्पै सोय ॥
पद्म पंचमी सुक्रतखेत । वांछित वसन निरंतर देत ॥ २७ ॥
मानव नाम छठी निधि जेह । आयुधजात जन्मभू देह ॥
सप्तम सुभग पिंगला नाम । बहुभूषन आपै अभिराम ॥२८॥
संख निधान आठमी गनी । सब वाजित्र-भूमिका बनी ॥
सर्वरत्न नवमी निधि सार । सो नित सर्वरत्नभंडार ॥ २९ ॥

दोहा ।

ये नौनिधि चक्रेसकै, सकटाकृत संठान ।
आठचक्रसंजुक्त सुभ, चौखूंटी सब जान ॥ ४० ॥

जोजन आठ उतंग अति, नव जोजन विस्तार।
बारह मित दीरघ सकल, बसैं गगन निरधार ॥ ४१ ॥
एक एकके सहस मित, रखवाले जखदेव।
ये निधि नरपति पुन्यसौं, सुखदायक स्वयमेव ॥ ४२ ॥

चौपई।

प्रथमसुदरसन चक्रपसत्थ। छहोखंडसाधन समरत्थ ॥
चडवेग दिढदंड दुतीय। जिस बल खुलै गुफा गिरिकीय४२
चर्मरत्न मो तृतिय निवेद। महा वज्रमय नीर अभेद ॥
चतुरथ चूडामनि मनि-रैन। अधकारनासक सुखदैन ॥४४॥
पंचम रत्न काकिनी जान। चिंतामनि जाकौ अभिधान ॥
इन दोनोतैं गुफामँझार। ससिसूरज लखिये निरधार ॥४५॥
सूरजप्रभ सुभ छत्र महान। सो अति जगमगाय ज्यो भान।
सौनंदक असि अधिक प्रचंड। डरै देखि बैरी बलवंड ४६
पुनि अजोध सेनापति सूर। जो दिगविजय करै बल भूर॥
बुधसागर प्रोहित परवीन। बुधिनिधान विद्यागुनलीन ४७
थपित भद्रमुख नाम महंत। सिलपकलाकोविद गुनवंत ॥
कामवृद्ध गृहपति विख्यात। सब गृहकाज करैं दिनरात ४८
व्याल विजयगिरि अति अभिराम। तुरग तेज पवनंजय नाम
वनिता नाम सुभद्रा कही। चूरै वज्र पानिसौं सही ॥४९ ॥
महादेहबल धारै सोय। जा पटतर तिय अवर न कोय ॥
मुख्यरतन यह चौदह जान। और रतनकौ कौन प्रमान ५०

दोहा ।

राजअंग चौदह रतन, विविध भांति सुखकार ।
जिनकी सुर सेवा करै, पुन्यतरोवर-डार ॥ ५१ ॥
चक्र छत्र असि दंड मनि, चर्म ककिनी नाम ।
सातरतन निर्जीव यह, चक्रवर्तिके धाम ॥ ५२ ॥
सेनापति गृहपति थपित, प्रोहित नाग तुरग ।
वनिता मिलि सातौं रतन, ये सजीव सरवंग ॥ ५३ ॥
चक्र छत्र असि दंड ये, उपजैं आयुधथान ॥
चर्म ककिनी मनिरतन, श्रीगृह उतपति जान ॥ ५४ ॥
गज तुरंग तिय तीन ये, रूपाचलतैं होत ।
चार रतन वाकी विमल, निजपुर लहैं उदोत ॥ ५५ ॥

चौपई ।

मुख्य संपदाकौ विरतंत । आगैं और सुनौ मतिवंत ॥
सिंहवाहनी सेज मनोग । सिंहारूढ चक्कवै जोग ॥ ५६ ॥
आसन तुंग अनुत्तर नाम । मानिकजालजटित अभिराम ॥
अनुपम नामा चमर अनूप । गंगातरलतरंगसरूप ॥ ५७ ॥
विद्युतद्युति मनिकुंडल जोट । छिपै और द्युति जाकी ओट ॥
कवच अभेद अभेद महान । जामैं भिदै न वैरीवान ॥ ५८ ॥
विसमोचिनी पादुका दोय । परपदसौं विष मुंचै सोय ॥
अजितजै रथ महारवन्न । जलपै थलवत करै गवन्न ॥ ५९ ॥
वज्रकांड चक्रीधर चाप । जाहि चढ़ावत नरपति आप ।
वान अमोघ जचै कर लेत । रनमैं सदा विजय वर देत ६०

विकट वज्रतुंडा अभिधान। सत्रुखंडिनी सकती जान॥
सिंहाटक बरछी विकराल। रतनदंड लागी रिपुकालै॥६१॥
लोहबाहिनी तीखन छुरी। जिमि चमकै चपलाद्युति दुरी॥
ये सब वस्तुजाति भूमाहिं। चक्री छूट और घर नाहिं॥६२॥

दोहा।

मनोवेग नामा कणय (?), ग्रंथन कह्यौ विख्यात।
खेटभूतमुख नाम है, दोनो आयुध जात॥ ६३॥

चौपई।

आनंदन भेरी दस दोय। बारह जोजन लौं धुनि होय॥
वज्रघोस पुनि जिनको नाम। बारह पटह नृपतिके धाम६४
वर गभीरावर्त गरीस। सोभनरूप सख चौवीस॥
नानावरन धुजा रमनीय। अडतालीस कोट मित कीय ६५
इत्यादिक बहुवस्तु अपार। बरनन करत न लहिये पार॥
महलतनी रचना असमान। जिनमत कही सो लीजै जान॥

दोहा।

चक्री नृपकी संपदा, कहै कहां लौं कोय॥
पुन्यबेल पूरब बई, फली साघनी सोय॥ ६७॥

इहि विध वज्रनाभि नरराय। करै भोग चक्रीपद पाय॥
धर्मध्यान अहनिसि आचरै। निर्मल नीतिपथ पग धरै॥
पूजा करै जिनालय जाय। पूजै सदा गुरुके पाय॥
सामायिक साधै अघनास। करै परब प्रोपधउपवास ६९

चारप्रकार दान नित देय । औगुन त्यागै गुन गह लेय ॥
सप्त सील पालै बड़भाग । मनवचकाय धर्मसौं राग ॥७० ॥
सिंहासनपर बैठि नरेस । करै पुनीत धर्म उपदेस ॥
सुजन सभाजन किंकरलोग। देय सुहितासिच्छा सब जोग ७१

दोहा।

बीजराखि फल भोगवैं, ज्यो किसान जगमाहिं ।
त्यों चक्रीनृप सुख करै, धर्म विसारै नाहिं ॥ ७२ ॥

नरेन्द्र अथवा जोगीरासा।

इहिविध राज करै नरनायक, भोगै पुन्य विसालो ॥
सुखसागरमैं रमत निरंतर, जात न जानै कालो ॥ ७३ ॥
एक दिना सुभकर्मसँजोगे, छेमंकर मुनि बंदे ।
देखे श्रीगुरुके पदपंकज, लोचन अलि आनंदे ॥ ७४ ॥
तीन प्रदच्छन दे सिर नायौ, करि पूजा थुति कीनी ।
साधु समीप विनय कर बैठ्यौ, पॉयनमैं दिठ दीनी ॥ ७५ ॥
गुरु उपदेस्यौ धर्म सिरोमनि, सुनि राजा वैरागे ॥
राज रमा वनितादिक जे रस, ते-रस बेरस लागे ॥ ७६ ॥
मुनिसूरजकथनी किरनावलि, लगत भरमबुध भागी ।
भव-तन-भोगसरूप विचारैं, परम-धरम-अनुरागी ॥ ७७ ॥
इस संसार महावनभीतर, भ्रमते ओर न आवै ।
जामन-मरन-जरा-दौं दाझ्यौ, जीव महादुख पावै ॥ ७८ ॥
कबही जाय नरकथिति भुजै, छेदन भेदन भारी ।
कबही पसु परजाय धरै तहँ, वध बंधन भयकारी ॥ ७९ ॥

दुरगतिमैं परसंपति देखै, रागउदय दुख होई।
मानुष जोनि अनेक विपतिमय, सर्वसुखी नहिं कोई ॥८०॥
कोई इष्टवियोगी बिलखै, कोई असुभसँजोगी।
कोइ दीन दारिद्र बिगूचे, कोई तनके रोगी ॥ ८१ ॥
किसही घर कलिहारी नारी, कै बैरी सम भाई।
किसहीके दुख बाहर दीखै, किसही उर दुचिताई ॥ ८२ ॥
कोई पुत्र बिना नित झूरै, होय मरै तब रोवै।
खोटी संततिसौं दुख उपजे, क्यों प्रानी सुख सोवै ॥ ८३ ॥
पुन्यउदय जिनकै तिनकौं भी, नाहिं सदा सुख साता।
यो जगवास जथारथ देखत, सब दीखै दुखदाता ॥ ८४ ॥
जो संसारविषै सुख हो तो, तीर्थंकर क्यो त्यागैं।
काहेकौं सिवसाधनकर ते, संजमसौं अनुरागैं ॥ ८५ ॥
देह अपावन अथिर घिनावन, यामैं सार न कोई।
सागरके जलसौं सुचि कीजै, तौ भी सुचि नहिं होई ॥८६॥
सात कुधातमई मलमूरति, चामपलेटी सोहै।
अंतर देखत या सम जगमैं, और अपावन को है ॥ ८७ ॥
नव मलद्वार स्रवैं निसिवासर, नांव लियैं घिन आवै।
व्याधि उपाधि अनेक जहां तहां, कौन सुधी सुख पावै॥८८
पोखत तौ दुख दोख करै सब, सोखत सुख उपजावै।
दुर्जन देहसुभाव बराबर, मूरख प्रीति बढावै ॥ ८९ ॥
राचनजोग स्वरूप न याकौ, विरचनजोग सही है।
यह तन पाय महा तप कीजै, यामैं सार यही है ॥ ९० ॥

भोग बुरे भवरोग बढ़ावें, वैरी हैं जग जीके ।
वेरस होहिं विपाक समै अति, सेवत लागैं नीके ॥ ९१ ॥
वज्र अगनि विषसौं विषधरसौं, ये अधिके दुखदाई ।
धर्मरतनके चोर चपल ये, दुर्गतिपंथ सहाई ॥ ९२ ॥
ज्यों ज्यों भोग सँजोग मनोहर, मनवांछित जन पावै ।
तिसना नागनि त्यों त्यों डकै, लहर जहरकी आवै ॥ ९३ ॥
मोह उदय यह जीव अग्यानी, भोग भले कर जानै ।
ज्यो कोई जन खाय धतूरो, सो सब कंचन मानै ॥ ९४ ॥
मैं चक्री पद पाय निरंतर, भोगे भोग घनेरे ।
तौ भी तनिक भये नहि पूरन, भोगमनोरथ मेरे ॥ ९५ ॥
राज-समाज महा अघकारन, वैर बढावनहारा ।
वेस्यासम लछमी अति चंचल, याकौ कौन पत्यारा ॥ ९६ ॥
मोह महा रिपु बैर विचारा, जगजिय संकट डाले ।
घर कारागृह वनिता बेड़ी, परिजन जन रखवाले ॥ ९७ ॥
सम्यकदरसन-ग्यान-चरन-तप, ये जियके हितकारी ।
ये ही सार असार और सब, यह चक्री चित धारी ॥ ९८ ॥
छोड़े चौदह रतन नवौं निधि, अरु छोडे संग साथी ।
कोड़ि अठारह घोड़े छोड़े, चौरासी लख हाथी ॥ ९९ ॥
इत्यादिक संपति बहुतेरी, जीरन तिन ज्यो त्यागी ।
नीति विचार नियोगी सुतकौं, राज दियौ बडभागी ॥१००
होय निसल्य अनेक नृपति सँग, भूषन वसन उतारे ।
श्री गुरुचरन धरी जिनमुद्रा, पंच महाव्रत धारे ॥ १०१ ॥

धन यह समझ सुबुद्धि जगोत्तम, धन यह धीरज भारी।
ऐसी संपति छोरि बसे वन, तिन पद ढोक हमारी॥१०२॥

दोहा।

परिग्रहपोट उतारि सब, लीनौं चारित पंथ।
निज सुभावमैं थिर भये, वज्रनाभि निरग्रंथ॥ १०३॥

चौपई।

बारहविध दुद्धरतप करै। दसलच्छनी धरम अनुसरै॥
पढ़ै अंग-पूरव सुति सार। एकाकी विचरै अनगार॥१०४॥
ग्रीपमकाल बसै गिरिसीस। बरसामैं तरुतल मुनिईस॥
सीतमास तटिनीतट रहैं। ध्यान अगनिमैं कर्मनि दहैं १०५
एक दिना बनमैं थिर काय। जोग दिये ठाढ़े मुनिराय॥
कमठजीव अजगर-तन छोरि। उपज्यौ छठे नरक अतिघोर
थिति सागर बाईस प्रमान। देखे दुख जानै भगवान्॥
पूरनआयु भोगकर मर्यौ। बनहिं कुरंग भील अवतर्यो १०७
कालसरूप वदन विकराल। बनचर जीवनको छयकाल॥
धनुषबान लीये निजपान। भ्रमै मांसलोभी बन थान १०८
सो पापी चल आयौ तहां। जोगारूढ खड़े मुनि जहां।
सत्रुमित्रसौं सम कर भाव। लगे आपमैं सुद्धसुभाव॥१०९॥
कुकुम कादौ महल मसान। कोमल सेज कठिन पापान॥
कंचन काच दुष्ट अरु दास। जीवन मरन बराबर जास॥११०॥
निर्ममत्त तनकी सुधि नाहिं। सातौं भय-वरजित उरमाहि॥
देखि दिगंबर कोप्यो नीच। कंपित अधर दसनतल भींच १११

तान कमान कान लौं लई । तीखन सर मार्‌यौ निरदई ॥
मुनिवर धर्मध्यान आराध । दुखमैं धीरज तज्यौ न साध ११२
दरसनग्यानचरन तप सार । चारौं आराधन चित धार ॥
देहत्याग तब भये मुनिंद्र । मध्यम ग्रैवेयिक अहमिंद्र ॥११३॥
तहँ उत्पादसिला निकलंक । हंसतूलजुत रतन पलंक ॥
उठयौ सेज तजि दीपत काय । अलपकालमैं जोबन पाय ११४
देखै दिसि अतिविस्मयरूप । महा मनोग विमान अनूप ॥
अतुल तेज अहमिंद्र निहार । अवधिज्ञान उपज्यौ तिहि बार॥
जान्यौ सब पूरव-भवभेव । चारित बिरछ फल्यौ सुखदेव ॥
अनुपम आठौं दरब सँजोय । रतनबिंब पूजे थिर होय ११६
आयौ सुर हर्षित निजथान । महारिद्धि महिमा असमान ॥
तीनभवनवरती जिनधाम । भावभक्ति नित करै प्रनाम ११७
तीर्थंकर केवलि-समुदाय । निजथानक-थित पूजै पाय ॥
पंचकल्यानक काल विचारि । प्रनमै हस्तकमल सिरधारि

दोहा ।

अनाहूत अहमिंद्रगन, आवैं सहज सुभाय ।
धर्मकथा जिनगुनकथन, करैं सनेह बढ़ाय ॥ ११९ ॥
कबहीं रतनविमानमैं, कबही महलमझार ।
कबही बनक्रीडा करैं, मिलि अहमिंद्रकुमार ॥ १२० ॥
और वास निज वासतैं, उत्तम दीसै नाहि ॥
ताहीतै ते अमरगन, और कहीं नहिं जाहिं ॥ १२१ ॥

प्रीत भरे गुन आगरे, सुभग सोम श्रीमन्त।
सातधात मलसौं रहित, लेस्या सुकल धरत॥ १२२॥
सब समान-संपतिधनी, सब मानैं हम इंद्र।
कला ग्यान विग्यानसम, ऐसे सुर अहमिंद्र॥ १२३॥
सुकल वरन तनमनहरन, दोय हाथ परिमान।
मानौं प्रतिमा फटिककी, महातेज दुतिवान॥ १२४॥
कामदाह उरमैं नहीं, नहिं वनिताकौ राग।
कल्पलोकके सुर सुखी, असंख्यातवें भाग॥ १२५॥
सत्ताईस हजार मित, बरस बीति जब जाहि।
मानसीक आहारकी, रुचि उपजै मनमाहि॥ १२६॥
साढे तेरह पच्छपर, लेत सुगंध उसास।
छठी अवनि लौं जिन कही, अवधिविक्रिया जास॥ १२७॥
सागर सत्ताईस मित, परम आयु तिहिं थान।
सुभग सुभद्र विमानमैं, यौं सुख करै महान॥ १२८॥

चौपई।

अब सो भील महादुखदाय। रुद्रध्यानसौं छोडी काय॥
मुनिहत्या-पातकतैं मर्‌यौ। चरम सुभ्रसागरमैं पर्‌यौ॥१२९॥

दोहा।

कथा तहाके कष्टकी, को कर सकै बखान।
भुगतै सो जानै सही, कै जानै भगवान्॥ १३०॥

दोहा।

जनमथान सब नरकमैं, अंध अधोमुख जौन।
घंटाकार घिनावनी, दुसह बास दुखभौन॥ १३१॥

तिनमैं उपजैं नारकी, तल सिर ऊपर पाय।
विषम वज्र कंटकमई, परैं भूमिपर आय॥ १३२॥
जो विषैल बीछू सहस, लगे देह दुख होय।
नरक धराके परसतैं, सरिस वेदना सोय॥ १३३॥
तहां परत परवान अति, हाहा करते एम।
ऊँचे उछलैं नारकी, तये तवा तिल जेम॥ १३४॥

सोरठा।

नरक सातवैंमाहिं, उछलन जोजन पांचसौ।
और जिनागममाहिं, जथाजोग सब जानियो॥ १३५॥

दोहा।

फेर आन भूपर परै, और कहां उडि जाहि।
छिन्न भिन्न तन अति दुखित, लोट लोट बिललाहि॥१३६॥
सब दिसि देखि अपूर्व थल, चकित चित्त भयवान।
मन सोचै मैं कौनहूं, पर्यौ कहां मैं आन॥ १३७॥
कौन भयानक भूमि यह, सबदुखथानक निंद।
रुद्ररूप ये कौन हैं, निठुर नारकीवृंद॥ १३८॥
काले बरन कराल मुख, गुंजा लोचन धार।
हुंडक डील डरावने, करैं मार ही मार॥ १३९॥
सुजन न कोई दिठ परै, सरन न सेवक कोय।
ह्यां सो कछु सूझै नहीं, जासौं छिन सुख होय॥ १४०॥
होत विभंगा अवधि तब, निजपरकौं दुखकार।
नरक कूपमैं आपकौं, पर्यौ जान निरधार॥ १४१॥

पूरबपापकलाप सब, आप जाप कर लेय।
तब विलापकी ताप तप, पश्चात्ताप करेय ॥ १४२ ॥
मैं मानुप परजाय धरि, धन-जोबन-मदलीन।
अधम काज ऐसे किये, नरकवास जिन दीन ॥ १४३ ॥
सरसोंसम सुखहेत तब, भयौ लंपटी जान।
ताहीकौ अब फल लग्यौ, यह दुख मेरु समान ॥ १४४ ॥
कंदमूल मद मांस मधु, और अभच्छ अनेक।
अच्छन-बस मच्छन किये, अटक न मानी एक ॥ १४५ ॥
जल थल नभचारी विविध, बिलवासी बहु जीव।
मैं पापी अपराध विन, मारे दीन अतीव ॥ १४६ ॥
नगरदाह कीनौं निठुर, गाम जलाये जान।
अटवीमैं दीनी अगनि, हिंसा कर सुखमान ॥ १४७ ॥
अपने इष्टीलोभकौं, बोल्यौ मृषा मलीन।
कलपित ग्रंथ बनायकै, बहकाये बहु दीन ॥ १४८ ॥
दावघातपरपंचसौं, परलछमी हर लीय।
छलबल हठबल दरबबल, परवनिता बस कीय ॥ १४९ ॥
बढ़ी परिग्रहपोट सिर, घटी न घटकी चाह।
ज्यो ईंधनके जोगसौं, अगनि करै अतिदाह ॥ १५० ॥
विन छान्यौ पानी पियौ, निसि भुंज्यौ अविचारि।
देवदरब खायौ सही, रुद्रध्यान उर धारि ॥ १५१ ॥
कीनी सेव कुदेवकी, कुगुरुनकौं गुरु मानि।
तिनहींके उपदेशसौं, पशु होमैं हित जानि ॥ १५२ ॥

दियौ न उत्तमदान मैं, लियौ न संजमभार ।
पियौ मूढ़ मिथ्यातमद, कियौ न तप जगसार ॥ १५३ ॥
जो धर्मीजन दयाकरि, दीनी सीस निहोर ।
मैं तिनसौं रिस करि अधम, भाखे वचन कठोर ॥ १५४ ॥
करी कमाई परजनम, सो आई मुझ तीर ।
हा हा अब कैसे धरूं, नरकधरामैं धीर ॥ १५५ ॥
दुर्लभ नरभव पायकैं, केई पुरुष प्रधान ।
तपकरि साधैं सुरग सिव, मैं अभागि यह थान ॥ १५६ ॥
पूरव संतन यों कही, करनी चालै लार ।
सो अब ऑखन देखिये, तब न करी निरधार ॥ १५७ ॥
जिस कुटुंबके हेत मैं, कीनैं बहुविध पाप ।
ते सब साथी बीछड़े, पर्यौ नरकमैं आप ॥ १५८ ॥
मेरी लछमी खानकौं, सीरी भये अनेक ।
अब इस बिपत बिलापमैं, कोउ न दीखै एक ॥ १५९ ॥
सारस सरवर तजि गये, सूखो नीर निराट ।
फलबिन बिरख बिलोककै, पंछी लागे बाट ॥ १६० ॥
पंचकरनपोषन अरथ, अनरथ किये अपार ।
ते रिपु ज्यो न्यारे भये, मोहि नरकमैं डार ॥ १६१ ॥
तब तिलभर दुख सहनकौं, हुतो अधीरज भाव ।
अब ये कैसे दुसह दुख, भरिहौं दीरघ आव ॥ १६२ ॥
अघ वैरीके बस पर्यौ, कहा करूं कित जाउं ।
सुनै कौन पूछूं किसे, सरन कौन इस ठाउ ॥ १६३ ॥

यहा कछू दुख हतनकौ, उक्त उपाव न मूर ।
थिति बिन बिपतसमुद्र यह, कब तिरहौं तट दूर ॥ १६४ ॥
ऐसी चिंता करत हू, बढ़ै वेदना एम ।
घीव तेलके जोगतैं, पावक प्रजुलै जेम ॥ १६५ ॥

सोरठा ।

इहिविध पूरब पाप, प्रथम नारकी सुधि करै ।
दुखउपजावन जाप, होय विभंगा अवधितैं ॥ १६६ ॥

दोहा ।

तब ही नारकि निर्दई, नयौ नारकी देख ।
धाय धाय मारन उठैं, महादुष्ट दुरभेख ॥ १६७ ॥
सब क्रोधी कलही सकल, सबके नेत्र फुलिंग ।
दुःख देनकौं अति निपुन, निठुर नपुसकलिंग ॥ १६८ ॥
कुंत कृपान कमान सर, सकती मुगदर दंड ।
इत्यादिक आयुध विविध, लिये हाथ परचंड ॥ १६९ ॥
कहि कठोर दुर्वचन बहु, तिल तिल खंड काय ।
सो तबही ततकाल तन, पारे-वत मिल जाय ॥ १७० ॥
कॉटेकर छेदैं चरन, भेदैं मरम विचारि ।
अस्थिजाल चूरन करैं, कुचलै खाल उपारि ॥ १७१ ॥
चीरैं करवत काठ ज्यों, फारैं पकरि कुठार ॥
तोड़ैं अतरमालिका, अंतर उदर बिदार ॥ १७२ ॥
पेलैं कोल्हू मेलकै, पीसैं घरटी घाल ।
तावैं ताते तेलमै, दहैं दहन परजाल ॥ १७३ ॥

पकरि पांय पटकैं पुहुमि, झटकि परसपर लेहिं।
कंटक सेज सुवावहीं, सूलीपर धरि देहिं॥ १७४॥
घसैं सकंटक रूखसौं, बैतरनी ले जाहिं।
घायल घेरि घसीटिए, किंचित करुना नाहिं॥ १७५॥
केई रक्त चुवाव (?) तन, विह्वल भाजैं ताम।
पर्वत अन्तर जायके, करैं बैठि विसराम॥ १७६॥
तहां भयानक नारकी, धारि विक्रिया भेख।
बाघ सिंह अहि रूपसौं, दारैं देह विसेख॥ १७७॥
केई करसौं पांय गहि, गिरसौं देहिं गिराय।
परैं आन दुर्भूमिपर, खड खंड हो जाय॥ १७८॥
दुखसौं कायर चित्तकरि, ढूंढैं सरन सहाय।
वे अति निर्दय घातकी, यह अति दीन घिघाय॥१७९॥
व्रण-वेदन नीकी करैं, ऐसे करि विस्वास।
सींचैं खारे नीरसौं, जो अति उपजै त्रास॥ १८०॥
केई जकरि जँजीरसौं, खैंचि थंभ अति बांधि।
सुध कराय अब मारिये, नाना आयुध साधि॥१८१॥
जिन उद्धत अभिमानसौं, कीनैं परभव पाप॥
तपतलोहआसनविषैं, त्रास दिखावैं थाप॥ १८२॥
ताती पुतली लोहकी, लाय लगावैं अंग।
प्रीत करी जिन पूर्वभव, परकामिनिके संग॥ १८३॥
लोचनदोपी जानिकै, लोचन लेहि निकाल।
मदिरापानी पुरुपकौं, प्यावैं तांबो गाल॥ १८४॥

जिन अंगनसौं अघ किये, तेई छेदे जाहिं।
पल-भच्छनके पापतैं, तोड़ि तोड़ि तन खाहिं॥ १८५॥
केई पूरब बैरके, याद दिवावैं नाम।
कह दुर्वचन अनेक बिध, करैं कोप संग्राम॥ १८६॥
भये विक्रिया देहसौं, बहुविध आयुधजात।
तिनहीसौं अति रिस भरे, करैं परस्पर घात॥ १८७॥
सिथिल होय चिर युद्धतैं, दीन नारकी जाम।
हिंसानंदी असुर दुठ, आन भिरावै ताम॥ १८८॥

सोरठा।

तृतिय नरक परजंत, असुरादिक दुख देत हैं।
भाख्यौ जिनसिद्धत, असुरगमन आगे नही॥ १८९॥

दोहा।

इहिविध नरक-निवासमैं, चैन एरूपल नाहि।
तपैं निरंतर नारकी, दुखदावानलमाहि॥ १९०॥
मार मार सुनिये सदा, छेत्र महा दुरगध।
बहै बात असुहावनी, असुध छेत्र संबंध॥ १९१॥
तीनलोककौ नाज सब, जो भच्छन कर लेय।
तौहू भूख न उपसमै, कौन एक कन देय॥ १९२॥
सागरके जलसौं जहा, पीवत प्यास न जाय।
लहै न पानी बूंदभर, दहै निरंतर काय॥ १९३॥
वायपित्तकफजनित जे, रोगजात जावंत।
तिन सबहीको नरकमैं, उदय कह्यौ भगवंत॥ १९४॥

कटुतुंबी सौं कटुक रस, करवतकी सी फांस।
जिनकी मृत मंजारसौं, अधिक देहदुरवास ॥ १९५ ॥
जोजन लाख प्रमान जहँ, लोहपिंड गल जाय।
ऐसी ही अति उसनता, ऐसी सीत सुभाय ॥ १९६ ॥

आडिल्ल छंद।

पंकप्रभापरजंत उसनता अति कही।
धूमप्रभामैं सीत उसन दोनौं सही ॥
छठी सातमी भूमि न केवल सीत है।
ताकी उपमा नाहिं महा विपरीत है ॥ १९७ ॥

दोहा।

स्वान स्यार मंजारकी, पड़ी कलेवर-रास।
मास वसा अरु रुधिरकौ, कादौ जहां कुवास ॥ १९८ ॥
ठाम ठाम असुहावने, सेंभल तरुवर भूर।
पैनैं दुखदैनैं विकट, कंटककलित करूर ॥ १९९ ॥
और जहां असिपत्र वन, भीम तरोवर खेत।
जिनके दल तरवारसे, लगत घाव करदेत ॥ २०० ॥
वैतरिनी सरिता समल, लोहित लहर भयान।
बहै खार सोनित भरी, मांसकीच घिन धान ॥ २०१ ॥
पछी वायस गीधगन, लोहतुंडसौं जेह।
मरम विदारैं दुख करैं, चूंटै चहुँदिस देह ॥ २०२ ॥
पंचेद्री मनकौं महा, जे दुखदायक जोग।
ते सब नरकनिकेतमैं, एकपिंड अमनोग ॥ २०३ ॥

कथा अपार कलेसकी, कहै कहां लौं कोय ।
कोड़ जीभसौं बरनिये, तऊ न पूरी होय ॥ २०४ ॥
सागरवध प्रमानथिति, छिनछिन तीसन त्रास ।
ये दुख देखें नारकी, परवस परे निवास ॥ २०५ ॥
जैसी परवस वेदना, सहै जीव बहु भाय ।
स्ववस सहै जो अंस भी, तौ भवजल तिरजाय ॥२०६॥
ऐसे नरकहिं नारकी, भयौ भील दुठ भाव ।
सागर सत्ताईसकी, धारी मध्यम आव ॥ २०७ ॥
सागर काल प्रमान अब, बरनौं औसर पाय ।
जिनसौं नरकनिवासकी, थिति सब जानी जाय ॥२०८॥

चौपई ।

पहले तीन पल्यके भेव । एकचित्तकरि सो सुन लेव ॥
जिनसौ सागर उपजै सही । जथारीत जिनसासन कही २०९

सोरठा ।

प्रथम पल्य व्योहार, दुतिय नाम उद्धार भन ।
अर्धा त्रितिय विचार, अब इनकौ विस्तार सुन ॥ २१० ॥

चौपई ।

पहले गोल कूप कलपिये । जोजन बड़े मान थरपिये ॥
इतनौ ही करिये गंभीर । बुधिबल ताहि भरौ नर धीर २११
सात दिवसके भीतर जेह । जनें मेढ़के बालक लेह ।
उत्तम भोगभूमिके जान । तिनके रोमअग्र मनआन ॥२१२॥
ऐसे सूच्छम करिये सोय । फेरि खंड जिनकौ नहिं होय ॥
तिन सौं महाकूप वह भरौ । बारंबार कूट दिढ़ करौ ॥२१३॥

तिन रोमनकी संख्या जान। पैंतालीस अंक परवान ॥
ते श्रीजिनसासनमें कहे। कर प्रतीत जैनी सरदहे ॥ २१४॥

चामर छंद।

चार एक तीन चार पांच दो छ तीन ले।
सुन्न तीन सुन्न आठ दोय अंक सुन्न दे ॥
तीन एक सात सात सात चार नौ करौ।
पांच एक दोय एक नौ समार दो धरौ ॥ २१५ ॥

दोहा।

सात बीस ये अंक लिखि, और अठारह सुन्न।
प्रथम पल्यके रोमकी, यह संख्या परिपुन्न ॥ २१६ ॥

चौपई।

सौ सौ बरस बीत जब जाहिं। एक एक काढ़ौ यामाहि ॥
ऐसी विध सब करते सोय। कूप उदर जब खाली होय २१७
जो कछु लगै काल परवान। सो ब्योहार पल्य उरआन ॥
प्रथम पल्य सबतैं लघुरूप। बीजभूत भाख्यौ जिनभूप२१८

दोहा।

संख्या कारन जिन कह्यौ, और न यासौं काज।
दुतिय पल्य विवरन सुनो, जो भाख्यौ जिनराज ॥ २१९ ॥

चौपई।

पूरवकथित रोम सब धरौ। तिनके अंस कल्पना करौ ॥
बरस असंख कोटिके जिते। समय होहिं आतम परिमिते२२०

एक एकके तावत मान। करौ भाग विकलप मन आन॥
याविध ठान रोमकी रास। समय समय प्रति एक निकास
जितनौं काल होय सब येह। सो उद्धार पल्य सुन लेह॥
याके रोमनसौं परवान। दीपोदधिकी संख्या जान॥२२२॥

दोहा।

कोडाकोडि पचीसके, पल्य रोम जावत।
तितनैं दीप समुद्र सब, बरनै जैनसिधंत॥ २२३॥

चौपई।

अब सुन त्रितिय पल्यकी कथा। श्रीजिनसासन बरनी जथा॥
दुतियपल्यके अमित अपार। रोम अस लीजै निर्धार २२४
एक एकके भाग प्रमान। करि सौ बरस समय परवान॥
इहिविध रासि होय फिर एह। समय समय प्रति लीजै तेह॥
ऐसे करत लगै जो काल। सोई अर्धापल्य विसाल॥
करमनकी थिति यासौं जान। यह उत्कृष्ट कही भगवान२२६

दोहा।

प्रथमपल्य संख्यातमित, दुतिय असंख्यप्रमान।
असख्यातगुन तीसरौ, लिख्यौ जिनागम जान॥ २२७॥
इन सब तीनों पल्यमैं, अद्धापल्य महान।
दस कोडा कोडी गये, अद्धासागर ठान॥ २२८॥
इस ही अद्धासिंधुसौं, पुन्यपाप परभाव।
ससारीजन भोगवै, सुरगनरककी आव॥ २२९॥

ऐसे दीरघ काल लौं, नरक सातवैं थान ।
कमठ जीव दुख भोगवे, परचौ कर्मवस आन ॥ २३० ॥
धिक धिक विषयकषायमल, ये वैरी जगमाहिं ।
ये ही मोहित जीवकौं, अवसि नरक ले जाहिं ॥ २३१ ॥
धर्म पदारथ धन्य जग, जा पटतर कछु नाहिं ।
दुर्गतिवास बचायकै, धरै सुरगसिवमाहिं ॥ २३२ ॥
यही जान जिनधर्मकौं, सेवो बुद्धिविशाल ।
मन तन वचन लगायकैं, तिहुँपन तीनौं काल ॥ २३३ ॥

इति श्रीमत्पार्श्वपुराणभाषाया वज्रनाभअहमिन्द्रसुखभिल्लनरक-
दु.खवर्णन नाम तृतीयोधिकार ॥ ३ ॥

# चौथा अधिकार।



सोरठा।

मारूथल संसार, वामानंदन कलपतरु।
वांछितफलदातार, सुखकामी सेवो सदा ॥१॥
इसही जंबूदीपमझार। भरतखंड दच्छिन दिसि सार ॥
कौसलदेस वसै अभिराम। नगर अजोध्या उत्तम ठाम ॥ २॥
आरजखंडमाहिं परधान। मध्यभाग राजै सुभथान ॥
गढ़ गोपुर खाई गृहपाति। वनबनसौं सोहै बहुभाति ॥३॥
ऊंचे जिनमंदिर मनहरैं। कंचन कलस धुजा फरहरैं ॥
वज्रबाहु भूपति तिहि थान। वर-इक्ष्वाकवंस-नभ-मान ॥४॥
जैनधर्म पालै बड़भाग। जिनपद-कमलनि मधुप सराग ॥
प्रभाकरी तिय ताघर सती। जीती जिन रंभा-रति-रती ॥५॥

दोहा।

यथा हंसके वसकौं, चाल न सिखवै कोय।
त्यों कुलीन नर-नारिकै, सहज नमन-गुन होय ॥ ६॥

चौपई।

वह अहमिंद्र तहातैं चयौ। तिनकै सुदिन पुत्र सो भयौ ॥
नाव धरयौ आनंदकुमार। अतुल तेज सब लच्छन सार॥७
सुभग सोम श्रीवत महान। बल-वीरज-धीरजगुनथान ॥
नरनारी-मन-मानिक-चोर। देखत नयन रहैं जा ओर ॥ ८॥
जाके सुगुन सेस कह थकै। और कौन बरनन कर सकै ॥
जोबनवंत जनक तिस देख। व्याहमहोत्सव कियौ विसेख ९

परनी राजसुता बहु भाय। जिनकी छवि वरनी नहिं जाय॥
क्रमसौं कुमर पितापद पाय। बलसौं बस कीये बहु राय १०

दोहा।

जोवन वय सपति बड़ी, मिल्यौ सकल सुखजोग।
'महामंडली' पद लह्यौ, पूरब-पुन्य-नियोग॥ ११॥

चौपई।

अब सुन आठ जातिके भूप। जिनकौ जिनमत कह्यौ सरूप॥
कोटि ग्रामकौ अधिपति होय। राजा नाम कहावै सोय १२
नवैं पांचसौ राजा जाहि। अधिराजा नृप कहिये ताहि॥
सहस राय जिस मानैं आन। महाराज राजा वह जान १३
दोय सहस नृप नवैं असेस। मंडलीक वह अर्ध नरेस॥
चार सहस जिस पूजैं पाय। सोई मंडलीक नरराय॥ १४॥
आठ सहस भूपतिकौ ईस। मंडलीक सो महा महीस॥
सोलह सहस नवैं भूपाल। सो अधचक्री पुन्यविसाल॥ १५
सहस बतीस आन जिस बहैं। ताहि सकलचक्री बुध कहैं॥
इनमैं श्रीआनंदनरेस। महामंडली पद परमेस॥ १६॥

सोरठा।

आठ सहस सुखहेत, नृप नछत्र सेवैं सदा।
कीरति-किरन-समेत, सोहै नरपतिचंद्रमा॥ १७॥

चौपई।

एक दिना आनंद महीस। बैठ्यौ सभा सिंहासनसीस॥
मंत्री तहां स्वामिहित नाम। कहै विवेकी सुवचन ताम १८

स्वामी यह वसंत रितुराज । सब जन करैं महोच्छवकाज ॥
नंदीसुर-व्रत अवसर येह । करिये प्रभु-पूजा जिन गेह ॥१९॥
पूजा सदा पाप निरदलै । पर्वसंजोग महाफल फलै ॥
परम पुन्यकौ कारन आन । नहीं जगतमैं जन्यसमान ॥२०॥

दोहा ।

जिनपूजाकी भावना, सब दुखहरन-उपाय ।
करते जो फल संपजे, सो बरन्यौ किमि जाय ॥ २१ ॥

चौपई ।

सुनि राजा मंत्री उपदेस । नगर महोच्छव कियौ विसेस ॥
करि सनान जिनमंदिर जाय। जैनबिंब पूजे बिहसाय ॥२२॥
बहुविध पूजा दरव मनोग। धरे आन जिनपूजनजोग ॥
भावभक्तिसौं मगल ठयौ। राजाके मन संसय भयौ ॥ २३ ॥
विपुलमती मुनिवर तिहि थान। दरसन कारन आये जान॥
तिनैं पूजि नृप पूछै येह । भो मुनींद्र मुझ मन संदेह ॥२४॥

दोहा।

प्रतिमा धात पखानकी, प्रगट अचेतन अंग ।
पूजक जनको पुन्यफल, क्यो कर देय अभग ॥ २५ ॥
तुम जगमै संसय-तिमिर,-दूरकरन रविरूप ।
यह मुझ भरम मिटाइये, करै बीनती भूप ॥ २६ ॥
तब ग्यानी गनधर कहैं, समाधान सुन राय।
भवि-जनकौं-प्रतिमा भगति, महापुन्य-फलदाय ॥ २७ ॥

भाव सुभासुभ जीवके, उपजैं कारन पाय।
पुन्य पाप तिनसौं बंधै, यों भाख्यौ जिनराय॥ २८॥
कुसुम बरनकौ जोग लहि, जैसे फटिक पखान।
अरुनस्याम दुतिकौं धरै, यही जीवकी बान॥ २९॥
सो कारन है दोय विध, अंतरंग बहिरंग॥
तिनके ही उर आय है, जे समझैं सरवंग॥ ३०॥
बाहिज कारन जानियौ, अंतरंगकौ हेत।
सोई अंतरभाव नित, कर्मबधकौं देत॥ ३१॥
जिन परिनामन पुन्य बहु, बधै अन्यथा नाहिं।
तिन भावनकौं निमित है, जिनप्रतिमा जगमाहिं॥३२॥
वीतरागमुद्रा निरखि, सुधि आवै भगवान।
वही भाव कारन महा, पुन्यबंधकौ जान॥ ३३॥
रागद्वेषवर्जित अमल, सुखदुखदाता नाहिं।
दर्पनवत भगवान हैं, यह आनौं उरमाहिं॥ ३४॥
तिनको चिंतन ध्यान जप, थुति पूजादिविधान॥
सुफल फलै निज भावसौं, ह्वै मुकती सुखदान॥ ३५॥
जैसे गुन प्रभुके कहे, ते जिन मुद्रामाहि।
थिरसरूप रागादिबिन, भूपन आयुध नाहिं॥ ३६॥
जद्यपि सिल्पीकृत कृतम, जिनवरबिम्ब अचेत।
तदापि सही अंतरविषैं, सुभभावनकौं हेत॥ ३७॥
और एक दिष्टांत अब, सुन अवनीपति सोय।
जियके उर दृष्टांतसौं, ससे रहै न कोय॥ ३८॥

चौपई।

गनिका धरी चितामैं जाय। बिसनी पुरुष देखि पछताय ॥
जो जीवत मुझ मिलतौ जोग। तो मैं करतौ वांछित भोग॥
स्वान कहै उर क्यों यह दही। मैं निज भच्छन करतौ सही ॥
पुनि तिहि देख कहैं मुनिराय। क्यों न कियौ तप यह तन पाय
इहि बिध देखि अचेतन अंग। उपजैं भाव पाय परसंग
तिन ही भावनके अनुसार। लाग्यौ फल तिनकौं तिहि बार

दोहा।

व्यसनी नर नरकहिं गयौ, लह्यौ भूखदुख स्वान ॥
साधु सुरग पहुँचे सही, भावनकौ फल जान ॥ ४२ ॥

चौपई।

यों जिनबिंब अचेतनरूप । सुखदायक तुम जानो भूप ॥
कारनसम कारज संपजै। यामैं बुध ससै नहिं भजै ॥ ४३ ॥

दोहा।

जैसैं चिंतामनि रतन, मनवांछितदातार।
तथा अचेतन बिंब यह, वांछापूरनहार ॥ ४४ ॥
ज्यों जाचत सुख कलपतरु, दानी जनकौं देय ॥
त्यों अचेत यह देत है, पूजकक्रौं सुख श्रेय ॥ ४५ ॥
मनिमंत्रादिक ओषधी, हैं प्रतच्छ जड़रूप।
विषरोगादिककौं हरैं, त्यों यह अघहर भूप ॥ ४६ ॥
जड़सरूपकी पूज पद, प्रगट देखिये लोय।
राजपत्र सिर धारिये, मुद्राअंकित होय ॥ ४७ ॥

राजपत्र सिर धारिये, राजाकौ भय मानि ।
जिनवरमुद्रा पूजिये, पातककौ डर जानि ॥ ४८ ॥
प्रतिमापूजन चिंतवन, दरसनआदि विधान ।
हैं प्रमान तिहुँ कालमैं, तीन लोकमैं जान ॥ ४९ ॥
जे प्रतिमा पूजैं नहीं, निंदा करैं अजान ।
तीन लोक तिहुंकालमैं, तिनसम अधम न आन ॥५०॥
जे प्रतिमा पूजैं सदा, भावभगति-विधि-सुद्धि ।
तिनकौ जनम सराहिये, धन तिनकी सद्बुद्धि ॥ ५१ ॥
इत्यादिक उपदेस सुनि, आई उर परतीत ।
जिनप्रतिमापूजनविषैं, धरी राय दिढ़ प्रीत ॥ ५२ ॥

चौपई ।

तिस औसर मुनि वरनै ताम । तीनभवनवरती जिनधाम ॥
भानुविमानविषै जिनगेह । सो पहले बरनै धरि नेह ॥५३॥
रतनमई प्रतिमा जगमगै । कोटभानुछवि छीनी लगै ॥
निरुपम रचना विविध विसाल। सूरजदेव नमैं तिहुँ काल५४
सुन आनंदौ आनँदराय । विकसत आनन अग न माय ॥
जब संदेहसल्य निरवरै। तब अवस्य उर सुख विस्तरै ॥५५॥
प्रात सांझ मंदिर चढ़ि सोय । अर्घ देय रविसम्मुख होय ॥
करि जिनबिंबनकौ मन ध्यान । अस्तुति करै राग मन आन
रविविमान मनिकंचनमई । निरमापो अद्भुत छवि छई ॥
जैनभवनकरि मंडित सोय। देखत जनमन अचरज होय॥५७॥

पूजा तहां करै नित राय। महा महोच्छव हर्ष बढ़ाय॥
प्रतिदिन देय दया उर आन। दीन दुखित जनकौं बहु दान५८
यह नितनेम करै भूपाल। चली नगरमैं सोई चाल॥
सब सूरजकौं करैं प्रनाम। देखादेखि चल्यौ मत ताम॥५९
समझैं नहीं मूढ़ परनये। भानुउपासक तबसौं भये॥
जो महंत नर कारज करै। ताकी रीत जगत आचरै॥६०॥
यों बहु पुन्य करै भूपाल। सुखमैं जात न जान्यौ काल॥
एक दिना निजसभा नरेस। निबसै मानौं सुरगसुरेस॥६१॥
धवल केस देख्यौ निज सीस। मन कंप्यौ सोचै नरईस॥
जाहि देखि मनउत्सव घटै। कामी जीवनकौ उर फटै॥६२॥
सो लखि सेत बाल भूपाल। भोगउदास भये ततकाल॥
जगतरीति सब अथिर असार। चितै चितमैं मोह निवार६३
बाल अवस्था भई बितीत। तरुनाई आई निज रीत॥
सो अब बीती जरा पसाय। मरन दिवस यों पहुंचे आय ६४
बालक काया कूँपल सोय। पत्ररूप जोवनमैं होय॥
पाको पात जरा तन करै। काल बयारि चलत झर परै॥६५॥
कोई गर्भमाहिं खिर जाय। कोई जनमत छोड़ै काय॥
कोई बालदसा धरि मरै। तरुन अवस्था तन परिहरै॥६६॥
मरन दिवसकौ नेम न कोय। यातै कछु सुधि परै न लोय॥
एक नेम यह तो परमान। जन्म धरै सो मरै निदान॥६७॥
महापुरुष उपजे बडभागि। सब परलोक गये तन त्यागि॥
संसारी जन अपनी बार। पूरबउदै करै अनुसार॥ ६८॥

परवतपतित नदीके न्याय। छिनही छिन थिति बीती जाय॥
रागअंधप्रानी जगमाहिं। भोगमगन कछु सोचै नाहिं॥६९॥
अंतकाल जब पहुंचै आय। कहा होय जो तब पछताय॥
पानी पहले बंधे जो पाल। वही काम आवै जल-काल॥७०॥
यही जान आतमहितहेत। करैं विलंब न संत सुचेत॥
आज काल जे करत रहाहिं। ते अजान पीछे पछताहिं ७१
रात दिवस घटमाल सुभाव। भरि भरि जलजीवनकी आव॥
सूरज चांद बैल ये दोय। काल रेंहट नित फेरैं सोय॥७२॥

दोहा।

राजा राना छत्रपति, हाथिनके असवार।
मरना सबकौं एक दिन, अपनी अपनी बार॥ ७३॥
दलबल देई देवता, मात पिता परिवार।
मरती विरियॉ जीवकौं, कोउ न राखनहार॥ ७४॥
दामबिना निर्धन दुखी, तिसनावस धनवान।
कहूं न सुख संसारमैं, सब जग देख्यौ छान॥ ७५॥
आप अकेला अवतरै, मरै अकेला होय।
यों कबही इस जीवका, साथी सगा न कोय॥ ७६॥
जहां देह अपनी नहीं, तहां न अपनो कोय।
परसम्पति पर प्रगट ये, पर हैं परिजन लोय॥ ७७॥
दिपै चाम-चादर-मढी, हाड पींजरा देह।
भीतर या सम जगतमैं, और नहीं घिनगेह॥ ७८॥

सोरठा

मोहनींदके जोर, जगवासी घूमै सदा।
कर्मचोर चहुँ ओर, सरवस लूटैं सुधि नहीं ॥ ७९ ॥
सतगुरु देहिं जगाय, मोहनींद जब उपसमै।
तब कछु बनै उपाय, कर्मचोर आवत रुकैं ॥ ८० ॥

दोहा।

ग्यान दीप तप तेल भरि, घर सौधै भ्रम छोर।
याविध बिन निकसैं नहीं, पैठे पूरब चोर ॥ ८१ ॥
पंचमहाव्रत-सचरन, समिति पंच परकार।
प्रबलपंच इंद्रीविजय, धार निर्जरा सार ॥ ८२ ॥
चौदह राजु उतंग नभ, लोकपुरुष संठान।
तामैं जीव अनादिसौं, भरमत है बिन ग्यान ॥ ८३ ॥
जाँचैं सुरतरु देहिं सुख, चिंतत चिंतारैन।
बिन जाँचैं बिन चिंतवैं, धर्म सकल सुख-दैन ॥ ८४ ॥
धन-कन-कंचन राजसुख, सबै सुलभ करि जान।
दुर्लभ है संसारमैं, एक जथारथ ग्यान ॥ ८५ ॥

चौपई।

इहिविध भूप भावना भाय। हितउद्यम चिंत्यौ मन लाय ॥
सबसौं मोह ममत निरवारि। उठ्यौ धीर धीरज उर धारि ८६
जेठे सुतकौं दीनौं राज। आप चल्यौ सिवसाधनकाज ॥
सागरदत्त मुनीसुरपास। संजम लियौ तजी जगआस॥८७॥
घने भूप भूपतिके संग। धरे महाव्रत निर्भय अंग ॥
अब आनंद महामुनि धीर। वननिवास विचरैं वन वीर ॥८८॥

परवतपतित नदीके न्याय। छिनही छिन थिति बीती जाय॥
रागअंधप्रानी जगमाहिं। भोगमगन कछु सोचै नाहिं॥६९॥
अंतकाल जब पहुंचै आय। कहा होय जो तब पछताय॥
पानी पहले बंधे जो पाल। वही काम आवै जल-काल॥७०॥
यही जान आतमहितहेत। करैं विलंब न संत सुचेत॥
आज काल जे करत रहाहिं। ते अजान पीछे पछताहिं ७१
रात दिवस घटमाल सुभाव। भरि भरि जलजीवनकी आव॥
सूरज चांद बैल ये दोय। काल रेंहट नित फेरैं सोय॥७२॥

दोहा।

राजा राना छत्रपति, हाथिनके असवार।
मरना सबकौं एक दिन, अपनी अपनी बार॥७३॥
दलबल देई देवता, मात पिता परिवार।
मरती विरियाँ जीवकौं, कोउ न राखनहार॥७४॥
दामबिना निर्धन दुखी, तिसनावस धनवान।
कहूँ न सुख संसारमैं, सब जग देख्यौ छान॥७५॥
आप अकेला अवतरै, मरै अकेला होय।
यों कबही इस जीवका, साथी सगा न कोय॥७६॥
जहां देह अपनी नहीं, तहां न अपनो कोय।
परसम्पति पर प्रगट ये, पर हैं परिजन लोय॥७७॥
दिपै चाम-चादर-मढी, हाड पींजरा देह।
भीतर या सम जगतमैं, और नहीं घिनगेह॥७८॥

सोरठा

मोहनींदके जोर, जगवासी घूमै सदा।
कर्मचोर चहुँ ओर, सरवस लूटैं सुधि नहीं ॥ ७९ ॥
सतगुरु देहिं जगाय, मोहनींद जब उपसमै।
तब कछु बनै उपाय, कर्मचोर आवत रुकैं ॥ ८० ॥

दोहा।

ग्यान दीप तप तेल भरि, घर सौधैं भ्रम छोर।
याविध बिन निकसैं नहीं, पैठे पूरब चोर ॥ ८१ ॥
पंचमहाव्रत-सचरन, समिति पंच परकार।
प्रबलपंच इंद्रीविजय, धार निर्जरा सार ॥ ८२ ॥
चौदह राजु उतग नभ, लोकपुरुष संठान।
तामैं जीव अनादिसौं, भरमत है बिन ग्यान ॥ ८३ ॥
जाँचैं सुरतरु देहिं सुख, चिंतत चिंतारैन।
बिन जाँचैं बिन चिंतवैं, धर्म सकल सुख-दैन ॥ ८४ ॥
धन-कन-कचन राजसुख, सबै सुलभ करि जान।
दुर्लभ है संसारमैं, एक जथारथ ग्यान ॥ ८५ ॥

चौपई।

इहिविध भूप भावना भाय। हितउद्यम चिंत्यौ मन लाय ॥
सबसौं मोह ममत निरवारि। उठ्यौ धीर धीरज उर धारि ८६
जेठे सुतकौं दीनौं राज। आप चल्यौ सिवसाधनकाज ॥
सागरदत्त मुनीसुरपास। संजम लियौ तजी जगआस॥८७॥
घनैं भूप भूपतिके संग। धरे महाव्रत निर्भय अंग ॥
अब आनंद महामुनि धीर। वननिवास विचरैं वन धीर ॥८८॥

दुद्धर तप बारह विध करै। दुविध संग-ममता परिहरै ॥
तिनके नाम कहूं कछु धार। जिनसासन जिनकौ विस्तार।८९।
प्रथम महातप अनसन नाम। दूजौ ऊनोदर गुनधाम ॥
तीजौ है व्रतपरिसंख्यान। रसपरित्याग चतुर्थम मान॥९०॥
पंचम भिन-सयनासन सार। कायकलेस छठौ अविकार ॥
यह षटविध बाहज तप जान। अब अन्तर तप सुनौ सुजान ९१
पहले प्राछित विनय दुतीय। वैयावृत तीजौ गन लीय ॥
चौथौ अन्तरंग सिज्झाय। पंचम तप व्युत्सर्ग बताय॥९२॥
षष्ठम ध्यान हरै सब खेद। ये अन्तरतपके सब भेद ॥
अब इनकौ संछेप सरूप। सुनौ संत तजि भाव विरूप ॥९३॥
जिनके सुनत बँधै सुभध्यान। सेवत पद लहिये निरवान ॥
तप बिन तीनकाल तिहुँ लोय। कर्मनास कबही नहिं होय ९४
दिनसौं लेय बरस लगि करै। चार प्रकार असन परिहरै ॥
राग-रोग-निर्दलन उपाय। सो अनसन भाख्यौ जिनराय९५
पौन अर्ध चौथाई टेक। एक ग्रास अथवा कन एक ॥
ऐसी विध जो भोजन लेत। ऊनोदर आलस हर लेत॥९६॥
जैसी प्रथम प्रतिग्या करै। ताही विध भोजन आदरै ॥
सो कहिये व्रतपरिसंख्यान। आसाव्याधि-विनासन जान९७
लवनादिक रस छांरि उपाध। नीरसभोजन भुंजै साध ॥
रसपरित्याग कहावै एम। इंद्रियमदनासन यह नेम॥ ९८ ॥
सून्यगेह गिरि गुफा मसान। नारि-नपुंसक-वर्जित थान ॥
बसै भिन्न-सयनासन सोय। यासौं सिद्धि ध्यानकी होय९९

ग्रीषमकाल बसै गिरि-सीस । पावसमैं तरुवरतल दीस ॥
सीतसमय तटिनीतट रहै । काय कलेस कहावै यहै ॥१००॥

दोहा ।

या तपके आचरनसौं, सहनसील मुनि होय ।
अब अन्तर-तप-भेद छह, कहूं जिनागम जोय ॥ १०१ ॥

चौपई ।

जो प्रमादवस लागै दोष । सोधै ताहि छोरि छल रोष ॥
आचारजवानी अनुसार । यही प्रथम प्राछित तप सार १०२
जे गुनजेठे साधु महंत । दरसन ग्यानी चारितवंत ॥
तिनकी विनय करै मनलाय । विनय नाम तप सो सुखदाय॥
रोगादिक पीडित अविलोय । बाल विरध मुनिवर जो होय॥
सेव करै निजसंजम राखि । सो वैयाव्रत आगमसाखि ॥१०४॥
सकतिसमान सकल गुन ठाठ । करै साधु परमागमपाठ ॥
परमोत्तम तप सो सिज्झाय । जासौं सब ससय मिटजाय १०५
निजसरीरममता परिहरै । काउसग्गमुद्रा दिढ धरै ॥
अन्तर बाहर परिग्रह छार । सोई तप व्युत्सर्ग उदार १०६
आरत रौद्र निवारै सोय । धर्म सकल ध्यावै थिर होय ॥
जहां सकल चिंता मिट जाहिं । वही ध्यानतप जिनमतमाहिं

दोहा ।

यह बारह विध तप विषम, तपै महामुनि धीर ॥
सहै परीषह बीस दो, ते अब बरनौं बीर ॥ १०८ ॥

छप्पय

छुधा तृषा हिम उसन, डंस मंसक दुखभारी।
निरावरन तन अरति, खेद उपजावन नारी॥
चरिया आसन सयन, दुष्ट वायक वध बंधन।
जांचैं नहीं अलाभ रोग, तिन-फरस निबंधन॥
मलजनित मान-सनमानवस, प्रग्या और अग्यान कर॥
दरसन मलीन बाईस सब, साधुपरीषह जान नर॥१०९॥

दोहा।

सूत्रपाठअनुसार ये, कहे परीषह नाम॥
इनके दुख जे मुनि सहैं, तिनप्रति सदा प्रनाम॥११०॥

सौमावती छद।

अनसन ऊनोदर तप पोषत, पाखमास दिन बीत गये हैं।
जोग न बनै जोग भिच्छाविधि, सूख अंग सब सिथिल भये हैं।
तब बहु दुसह भूखकी वेदन, सहत साधु नहिं नेक नये हैं।
तिनके चरनकमल प्रति दिन दिन, हाथ जोरि हम सीस ठये हैं
पराधीन मुनिवरकी भिच्छा, परघर लेहिं कहैं कछु नाहीं।
प्रकृति विरोधि पारना भुंजत, बढत प्यासकी त्रास तहांहीं।
ग्रीषमकाल पित्त अति कोपै, लोचन दोय फिरे जब जाहीं।
नीर न चहैं सहैं ऐसे मुनि, जयवंते बरतौ जगमाहीं॥११२॥
सीतकाल सबही जन कांपैं, खड़े जहां बन बिरछ डहे हैं।
झझा वायु बहै बरसा रित, बरसत बादल झूम रहे हैं॥
तहां धीर तटिनीतट चौबट, ताल-पालपै कर्म दहे हैं॥
सहैं सँभाल सीतकी बाधा, ते मुनि तारनतरन कहे हैं ११३

भूख प्यास पीड़ै उर अंतर, प्रजलै आंत देह सब दागै।
अगनिसरूप धूप ग्रीषमकी, ताती बाल झालसी लागै॥
तपै पहार ताप तन उपजै, कोपै पित्त दाहजूर जागै।
इत्यादिक ग्रीषमकी बाधा, सहत साधु धीरज नहि त्यागै॥
डांस मांस माखी तन काटैं, पीड़ैं बनपंछी बहुतेरे।
डसैं व्याल विषयाले बीछू, लगैं खजूरे आन घनेरे॥
सिंह स्याल सुंडाल सतावैं, रीछ रोझ दुख देहिं बड़ेरे।
ऐसे कष्ट सहैं समभावन, ते मुनिराज हरौ अघ मेरे॥११५॥
अंतर विषय-वासना बरतै, बाहर लोकलाजभय भारी।
तातैं परम दिगंवरमुद्रा, धर नहिं सकैं दीन संसारी॥
ऐसी दुद्धर नगन परीषह, जीतैं साधु सीलव्रतधारी।
निर्विकार बालकवत निर्भय, तिनके पायन ढोक हमारी ११६
देस कालको कारन लहिके, होत अचैन अनेक प्रकारै।
तब तहां खिन्न होहि जगवासी, कलमलाय थिरतापद छारै॥
ऐसी अरति परीषह उपजत, तहां धीर धीरज उर धारैं।
ऐसे साधनको उर अंतर, बसौ निरंतर नाम हमारैं॥११७॥
जे प्रधान केहरिकौं पकरैं, पन्नग पकरि पांवसौं चंपत।
जिनकी तनक देखि भौं बांकी, कोटिक सूर दीनता जंपत॥
ऐसो पुरुष-पहार-उड़ावन,—प्रलय-पवन तिय-वेद पयंपत।
धन्य धन्य ते साधु साहसी, मनसुमेरु जिनको नहि कंपत ११८
चारहाथ परवान निरखि पथ, चलत दृष्टि इत उत नहि तानैं।
कोमल पांय कठिन धरती पर, धरत धीर बाधा नहि मानैं॥

नाग तुरंग पालकी चढ़ते, ते सवाद उर यादि न आनैं ।
यों मुनिराज भरैं चर्यादुख, तब दिढ़कर्म कुलाचल भानैं११९
गुफा मसान सैल तरु कोटर, निवसैं जहां सुद्धि भू हेरैं ।
परिमित काल रहैं निहचल तन, बारबार आसन नहिं फेरैं ॥
मानुष देव अचेतन पसुकृत, बैठे विपत आन जब घेरै ।
ठौर न तजैं भजैं थिरता पद, ते गुरु सदा बसौ उर मेरै१२०
जे महान सोनेके महलन, सुंदरसेज सोय सुख जोवैं ।
ते अब अचलअंग एकासन, कोमल कठिन भूमिपर सोवैं ॥
पाहन-खंड कठोर कांकरी, गड़त कोर कायर नहिं होवैं ।
ऐसी सयन-परीषह जीतत, ते मुनि कर्मकालिमा धोवैं१२१
जगत जीव जावंत चराचर, सबके हित सबके सुखदानी ।
तिनैं देख दुर्वचन कहैं दुठ, पाखंडी ठग यह अभिमानी ॥
मारो याहि पकरि पापीकौं, तपसी-भेष चोर है छानी ।
ऐसे वचनबाणकी वर्षा, छिमाढाल ओढ़ैं मुनिग्यानी॥१२२॥
निरपराध निर्वैर महा मुनि, तिनकौं दुष्टलोग मिलि मारैं ।
केई खैंच थंभसौं बांधत, केई पावकमैं परजारैं ॥
तहां कोप नहिं करहिं कदाचित, पूरबकर्मविपाक विचारैं॥
समरथ होय सहैं बध बंधन, ते गुरु सदा सहाय हमारैं१२३
घोर वीर तप करत तपोधन, भयौ खीन सूखी गल बाहीं ।
आस्थि चाम अवसेस रह्यौ तन, नसाजाल झलक्यौ जिसमाहीं।
ओषधि असन पान इत्यादिक, प्रान जाय पर जांचत नाहीं ।
दुद्धर अजाचीक व्रत धारैं, करहिं न मलिन धरमपरछाहीं॥

एक बार भोजनकी बिरियाँ, मौन साधि बसतीमैं आवैं ॥
जो नहि बनै जोग भिच्छाविधि, तौ महत मन खेद न लावैं
ऐसे भ्रमत बहुत दिन बीतैं, तब तप विरद भावना भावैं।
यों अलाभकी परम परीषह, सहैं साधु सोई सिव पावैं १२५
बात पित्त कफ सोनित चारौं, ये जब घटै बढ़ैं तनमाहैं।
रोगसंजोग सोग तन उपजत, जगत जीव कायर हो जाहैं॥
ऐसी व्याधि वेदना दारुन, सहैं सूर उपचार न चाहैं ॥
आतम-लीन देहसौं विरकत, जैन जती निज नेम निवाहैं १२६
सूखे तिन अरु तीछन काटे, कठिन काकरी पाय विदारै।
रज उड़ि आय परै लोचनमैं, तीर फांस तन पीर विथारै॥
तापर पर सहाय नहि वांछत, अपने करसौं काढ़ न डारैं ॥
यो तिन-परस-परीषहविजई, ते गुरु भव भव सरन हमारैं १२७
जावजीव जलन्हौन तज्यौ जिन, नगनरूप बनथान खरे है।
चलै पसेव धूपकी बिरियाँ, उड़त धूल सब अंग भरे हैं ॥
मलिन देहको देखि महामुनि, मलिन भाव उर नाहिं करे हैं।
यो मलजनित परीषह जीतैं, तिनैं हाथ हम सीस धरे है१२८
जे महान विद्यानिधि विजई, चिरतपसी गुन अतुल भरे हैं।
तिनकी विनय वचनसौं अथवा, उठि प्रनाम जन नाहिं करे हैं
तौ मुनि तहाँ खेद नहि मानैं, उर मलीनता भाव हरे है।
ऐसे परमसाधुके अहनिसि, हाथ जोरि हम पांय परे है १२९
तर्क छन्द व्याकरन कलानिधि, आगम अलंकार पढ़ जानैं।
जाकी सुमति देखि परवादी, बिलखे होहिं लाज उर आनैं ॥

जैसैं नाद सुनत केहरिकौ, वनगयन्द भागत भय मानैं ।
ऐसी महाबुद्धिके भाजन, पै मुनीस मद रंच न ठानैं॥१३०॥
सावधान बरतैं निसिवासर, संजमसूर परमवैरागी ।
पालत गुपति गये दीरघ दिन, सकल संग-ममतापरित्यागी
अवधिग्यान अथवा मनपरजय, केवलकिरन अजौं नहिं जागी
यो विकलप नहि करहिं तपोधन, सो अग्यानविजई बड़भागी
मैं चिर काल घोर तप कीनौं, अजौं, रिद्धि-आतिसय नहिं जागै
तपबल सिद्ध होंहिं सब सुनिये, सो कछु बात झूठसी लागै॥
यों कदापि चितमैं नहिं चिंतत, समकित-सुद्ध-सांतरसपागे ।
सोई साधु अदर्सनविजई, ताके दरसनसौं अघ भागे ॥१३२॥

कवित्त इकतीसा ।

ग्यानावरणीसौं दोय प्रग्या अग्यान होय,
एक महामोहतैं अदरस बखानिये ।
अतरायकर्मसेती उपजै अलाभ दुख,
सपत चारित्रमोहनीके बल जानिये ॥
नगन निषिद्या नारि मान सनमान गारि,
जांचना अरति सब ग्यारै ठीक ठानिये ।
एकादस बाकी रहीं वेदनी उदैसौं कहीं,
बाइस परीषा उदै, ऐसे उर आनिये ॥ १३३ ॥

आडिल्ल ।

एक बार इनमाहिं, एक मुनिके कही ।
सब उनीस उतकृष्ट, उदय आवैं सही ॥

आसन सयन विहार, दोय इनमाहिंकी ।
सीत उसनमैं एक, तीन ये नाहिंकी ॥ १३४ ॥

दोहा।

अब दसलच्छन धर्मके, कहूं मूल दस अंग ।
जे नित श्रीआनंद मुनि, पालत हैं सरवंग ॥ १३५ ॥

चौपई।

बिनादोप दुर्जन दुख देय । समरथ होय सकल सह लेय ॥
क्रोध कषाय न उपजे जहां । उत्तम छिमा कहावै तहां १३६
आठ महामद पाय अनूप । निरभिमान बरतै मृदुरूप ॥
मानकषाय जहां नहिं होय । मार्दव नाम धरम है सोय१३७
जो मनचिंतै सो मुख कहै । करै कायसौं कारज वहै ॥
मायाचार न उर पाइये । आर्जव धर्म यही गाइये ॥१३८॥
बोलै वचन स्वपराहितकार । सत्यस्वरूप सुधा-उनहार ॥
मिथ्यावचन कहै नहिं भूल । सोई सत्य धर्मतरुमूल ॥१३९
पर-कामिनि पर-दरवमझार । जो विरक्त बरतै छल छार ॥
अंतर सुद्ध होय सरवंग । सोई सौच धर्मको अंग ॥ १४० ॥
मन समेत जो इंद्री पंच । इनकौं सिथिल करै नहिं रंच ॥
त्रस थावरकी रच्छा जोय । संजम धर्म बखान्यौ सोय१४१
ख्याति लाभ पूजा सब छंड । पंच करनकौं दीजै दंड ॥
सो तपधर्म कह्यौ जगसार । अनसनादि बारह परकार॥१४२
संजमधारी व्रती प्रधान । दीजै चउविध उत्तम दान ॥
तथा दुष्टविकलप परिहार । त्यागधर्म बहु सुखदातार१४३॥

बाहिज परिग्रहकौं परित्याग । अंतर ममता रहै न लाग
आकिंचन यह धर्म महान । सिवपददायक निहचै जान१
बड़ी नारि जननी सम जान। लघु पुत्री सम बहिन बखान
तजि विकार मन बरतै जेह । ब्रह्मचर्य परिपूरन एह १४

दोहा ।

सोलह कारन भावना, भावैं मुनि आनंद ।
तिनकौ नाम सरूप कछु, लिखौं सकल सुखकंद ॥१४

चौपई ।

आठ दोष मद आठ मलीन । छै अनायतन सठता तीन
ये पचीस मलवरजित होय । दर्सनसुद्धि कहावै सोय १४
रत्नत्रयधारी मुनिराय । दर्सनग्यानचरितसमुदाय ॥
इनकी विनयविषैं परवीन । दुतियभावना सो अमलीन१४
सीलभार धारै समचेत । सहस अठारह अंग समेत ॥
अतीचार नहिं लागै जहां । तृतिय भावना कहिये तहां१४
आगमकथित अर्थ अवधार। जथासकति निजबुधि अनुस
करै निरंतर ग्यान अभ्यास । तुरिय भावना कहिये तास १५

दोहा ।

धर्म धर्मके फलविषै, बरतै प्रीति विसेख ।
यही भावना पचमी, लिखी जिनागम देख ॥ १५१ ॥

चौपई ।

ओषधि अभय ग्यान आहार । महादान यह चार प्रकार
सक्तिसमान सदा निरवहै । छठीभावनाधारक वहै ॥ १५२

अनसन आदि मुकतिदातार। उत्तम तप बारह परकार॥
बल अनुसार करै जो कोय। सो सातमी भावना होय॥
जतीवर्गकौं कारन पाय। विघन होत जो करै सहाय॥
साधुसमाधि कहावै सोय। यही भावना अष्टम होय॥१५४॥
दसविध साधु जिनागम कहे। पथपीड़ित रोगादिक गहे॥
तिनकी जो सेवा-सतकार। यही भावना नौमी सार॥१५५॥
परमपूज्य आतम अरहंत। अतुल अनंत चतुष्टयवंत॥
तिनकी थुति नति पूजा भाव। दसम भावना भवजल-नाव
जिनवरकथित अर्थ अवधार। रचना करै अनेक प्रकार॥
आचारजकी भक्तिविधान। एकादसम भावना जान १५७
विद्यादायक विद्यालीन। गुणगरिष्ठ पाठक, परवीन॥
तिनके चरन सदा चित रहै। बहुश्रुतिभक्ति बारमी यहै १५८
भगवतभाषित अर्थ अनूप। गनधरग्रंथित ग्रंथसरूप॥
तहां भक्ति वरतै अमलान। प्रवचनभक्ति तेरमी जान
षट आवश्यक क्रिया विधान। तिनकी कबही करै न हान॥
सावधान वरतै थिरचित्त। सो चौदहमी परमपवित्त॥१६०॥
करि जप तप पूजा व्रत भाव। प्रगट करै जिनधर्मप्रभाव॥
सोई मारग परभावना। यहै पचदसमी भावना॥ १६१॥
चार प्रकार संघसौं प्रीति। राखै गाय-वच्छकी रीति॥
यही सोलमी सबसुखदाय। प्रवचनवात्सल्य अभिधाय १६२

दोहा।

सोलहकारन भावना, परमपुन्यकौ खेत।
भिन्न भिन्न अरु सोलहों, तीर्थंकरपद हेत॥ १६३॥

बंधप्रकृति जिनमतविषैं, कहीं एकसौ बीस।
सो सत्रह मिथ्यातमैं, बांधत है निसदीस॥ १६४॥
तीर्थंकर आहार दुक, तीन प्रकृति ये जान।
इनकौ बंध मिथ्यातमैं, कह्यौ नहीं भगवान॥ १६५॥
तातैं तीर्थंकर प्रकृति, तीनों समकितमाहिं॥
सोलह कारनसौं बंधै, सबकौ निहचै नाहिं॥ १६६॥

सोरठा।

पूज्यपाद मुनिराय, श्रीसरवारथसिद्धिमैं।
कह्यौ कथन इहि भाय, देखि लीजियो सुबुधिजन १६७

कुसमलता।

सोलह कारन ये भवतारन, सुमरत पावन होय हियौ।
भावैं श्रीआनंदमहामुनि, तीर्थंकरपदबंध कियौ॥१६८॥
काय कषाय करी कृस अति ही, सत संजम गुण पोढ कियौ।
तपबल नाना रिद्धि उपन्नी, राग विरोध निवार दियौ॥
जिस बन जोग धरै जोगेसर, तिस बनकी सब विपत टलैं
पानी भरहिं सरोवर सूखे, सब रितुके फलफूल फलैं १७०
सिंहादिक जे जातविरोधी, ते सब बैरी बैर तजैं।
हंस भुजंगम मोर मंजारी, आपसमैं मिलि प्रीति भजैं १७१
सोहैं साधु चढ़े समतारथ, परमारथ पथ गमन करैं।
सिवपुर पहुंचनकी उर वांछा, और न कछु चित चाह धरैं
देहविरक्त ममत्तविना मुनि, सबसौं मैत्री भाव वहैं।
आतमलीन अदीन अनाकुल, गुन वरनत नहि पार लहैं

एक दिना ते छीर बनांतर, ठाड़े मुनि वैराग भरे।
पौनपरीपहसौं नहिं कांपैं, मेरुसिसर ज्यों अचल खरे १७४
सो मर नरक कमठचर पापी, नानाभांति विपत्ति भरी।
तिसही काननमें विकटानन, पंचाननकी देह धरी ॥१७५॥
देखि दिगंबर केहरि कोप्यौ, पूर्वभवातर बैरदह्यौ।
धायौ दुष्ट दहाड़ ततच्छन, आन अचानक कंठ गह्यौ १७६
तीखे नखन विदारे काया, हाथ कठोरन खंड करै ॥
बांकी दाढ़नसौं तन भेदै, वदन भयानक ग्रास भरै ॥१७७॥
यों पसुकृत परचंड परीपह, समभावनसौं साधु सही ॥
क्रोध विरोध हिये नहि आन्यौ, परमछिमा उरमाझ वही
धनि धनि श्रीआनंदमुनीसुर, धनि यह धीरजभाव भजे।
ऐसे घोर उपद्रवमें जिन, जोगजुगतसौं प्रान तजे ॥ १७९ ॥
अंतसमयपरजंत तपोधन, सुभभावनसौं नाहि चये।
आनत नाम स्वर्गमें स्वामी, सुरगनपूजित इन्द्र भये ॥१८०॥

दोहा।

सुरगलोक बरनन लिखौं, जथासकतिसुखरीत।
धर्म धर्मके फलविषैं, ज्यों मन उपजै प्रीत ॥ १८१ ॥

चौपई।

चंद्रकांतिमूँगामनिमई। नानावरन भूमि बरनई ॥
रातादिवसकौ भेद न जहां। रतनउदोत निरंतर तहां ॥१८२॥
मनि कंगुरे कंचन प्राकार। औंड़ी परिखा ऊचे द्वार ॥
तोरन तुंग रतनगृह लसैं। ऐसे सुरगलोकपुर बसैं ॥ १८३ ॥

चंपक पारिजात मंदार। फूलन फैल रही महकार॥
चैतविरछतैं बढ़्यौ सुहाग। ऐसे सुरग रवाने बाग॥ १८४॥
विपुल वापिका राजैं खरीं। निर्मल नीर सुधामय भरीं॥
कंचनकमलछई छविवान। मानिकखंडखचित सोपान१८५
कामधेनु सौहैं सब गाय। कलपवृच्छ सबही तरुराय॥
रतनजाति चिंतामनि सबै। उपमा कौन सुरगकौं फबै१८६
गान करैं कहिं सुरसुंदरीं। बन-वीथिन बैठीं रसभरी॥
कहीं देवगन वनितासंग। लीलाबन विचरैं मनरंग॥१८७॥
मंद सुगंधि वहै नित वाय। पहुपरैनुरंजित सुखदाय॥
आंधी मेह न कबहीं होय। ताप तुसार न व्यापै कोय १८८
रितुकी रीति फिरै नहिं कदा। सोमकाल सुखदायक सदा॥
छत्रभंग चोरी उतपात। सुपने नहीं उपद्रवजात॥ १८९॥
ईति भीति भूचाल न होय। वैरी दुष्ट न दीसै कोय॥
रोगी दोखी दुखिया दीन। विरधवैस गुणसंपतिहीन १९०
बढती अंगविकलता कहीं। ये सब सुरगलोकमैं नहीं॥
सहज सोम सुंदर सरवंग। सब आभरनअलंकृत अंग १९१
लच्छनलंछित सुरभि सरीर। रिद्धिसिद्धिमंदिर मनधीर॥
कामसरूपी आनँदकंद। कामिनिनेत्रकमलिनीचंद ॥१९२॥
बदन प्रसन्न प्रीतरस भरे। विनयबुद्धिविद्या आगरे॥
यों बहुगुणमंडित स्वयमेव। ऐसे सुरगनिवासी देव॥१९३॥

दोहा।

ललितवचन लीलावती, सुमलच्छन सुकुमाल।
सहजसुगंध सुहावनी, जथा मालतीमाल॥ १९४॥

सीलरूप लावन्यनिधि, हावभावरसलीन।
सीमा सुभगसिंगारकी, सकलकलापरवीन ॥ १९५ ॥
निरत गीत सगीत सुर, सब रसरीतमँझार ॥
कोविद होंहि सुभावतैं, सुरगलोककी नार ॥ १९६ ॥
पचइंद्रिमनकौ महा, जे जगमैं सुखहेत।
तिन सबहीकौ जानियौ, सुरगलोकसंकेत ॥ १९७ ॥

चौपई।

इत्यादिक बहुसंपतिथान। देवलोकमहिमा असमान ॥
आनतवर विमान है जहां। धरयौ जनम सुरपतिने तहा ॥

दोहा।

उपज्यौ संपुट गर्भतैं, तेज पुंज अति चड।
मानौं जलधरपटलतैं, प्रगट्यौ दामिनि-दंड ॥ १९९ ॥
एक महूरतमैं तहां, संपूरन तन धार।
किधौं रतनकी सेज तजि, सोवत उठ्यौ कुमार ॥ २००॥
मनिकिरीट माथे दिपै, आनन अधिकसुरूप।
कानन कुंडल जगमगै, पानन कटक अनूप ॥ २०१ ॥
भुजभूपनभूपित भुजा, हिये हार छवि देत।
अग अंग इत्यादि बहु, सब आभरनसमेत ॥ २०२ ॥

चौपई।

सनै सनै देखै दिस सही। लोचनकोर कान लगि रही॥
विसमयवंत होय मन ताम। कहै कौन आयौ किस धाम॥
अहो कौन यह उत्तम देस। सकलसपदाथान विसेस ॥
कंचनके मंदिर मनिजरे। दीसैं दिव्य अपछराभरे ॥ २०४॥

अति उतंग अति ही दुति धरै। मध्य सभा मंडप मनहरै ॥
सिंहासन अद्भुत इहि ठाम। मानौं मेरुसिखर अभिराम ॥
अनुपम नाटक देखनजोग। श्रवणसुखद ये गीत मनोग ॥
ये लावन्यवती वरनारि। रूपजलधिवेला उनहारि।२०६।
ये उतंग हाथी मदभरे। तेज तुरंगनके गन खरे ॥
कचनरथ पायकदल जेह। मो प्रति सिर नावैं सब येह २०७
सब आनद भरे मुझ देख। सब विनीत सब सुंदर भेख ॥
जयजयकार करैं विहँसाय। कारन कछु जान्यौ नहिं जाय

दोहा।

इन्द्रजाल अथवा सुपन, कै माया भ्रम कोय।
यों सुरेस सोचै हिये, पै निरनय नहिं होय ॥ २०९ ॥

चौपई।

तब तिस थानक देव प्रधान। मनकी बात अवधिसौं जान
जोगवचन बोलै सिरनाय। संसयहरन स्रवनसुखदाय २१०
हम विनती सुनिये सुरराज। जीवन जनम सफल सब आज
अब सनाथ स्वामी हम भये। जनमजोगतैं पावन थये २११
सूरजउदय कमलिनी-बाग। विकसै जथा जग्यौ सिर भाग
नन्द वर्ध हम देहिं असीस। चिर यह राज करौ सुरईस ॥
अहो नाथ यह उत्तम ठाम। सुरग तेरमो आनत नाम ॥
जगतसार लछमीको येह। निरुपमभोग निरंतर गेह॥२१३॥
तुम इहि थान इन्द्र अवतरे। पूर्वजन्म दुद्धर तप धरे ॥
ये सब सुर सेवक तुमतनें। ये परिवार लोक हैं घनें॥२१४॥

सोरठा।

ये मनोग वनितामंडली। तुम आदेस चहै मनरली॥
ये पटदेवी लावनखान। सब देवी इन मानैं आन ॥२१५॥
ये विमान पुर महल उतंग। चमर छत्र सेना सतग॥
धुजासिंहासनआदि मनोग। सकल सम्पदा यह तुम जोग२१६
ऐसे वचन अनन्तर तबै। जान्यौ इन्द्र अवधिबल सबै॥
मैं पूरव कीनौं तप घोर। दंडे करम धरमधनचोर ॥२१७॥
जीवजातकौं निर्भयदान। दीनौं आप बराबर जान॥
सब उपसर्ग सहे धरि धीर। जीत्यौ महारागरिपु वीर२१८
काम विषम वैरी वस कियौ। अरु कषाय बनकौं जारियौ।
जिनवरआन अखंडित पोष। चारित चिर पाल्यौ निरदोष
इहि विध सेयौ धर्म महान। तिस प्रभाव दीखै यह थान।
दुरगतिपात निवारन करौ। तिन मुझ इंद्रलोक ले धरौ २२०
सो अब सुलभ नहीं इस देह। भोग जोग है थानक येह॥
रागआग दुखदायक सदा। चारितजल विन बुझै न कदा॥
सो कारन सुरगतिमें नाहिं। व्रतकौ उदय न या पदमाहिं।
ह्यां सम्यक्‌दरसन अधिकार। संकादिक मलवरजित सार२२२
कै जिनवरकी भक्ति सहाय। और न दीखै धर्मउपाय॥
यह विचारि जिनपूजनहेत। उठ्यौ इन्द्र परिवारसमेत२२३
अमृतवापिकामें करि न्हौन। गयौ जहां मनिमय जिनभौन
रतनबिम्ब वन्दे विहसाय। भावभगतसौं सीस नवाय २२४

पूजा करी दरव धरि आठ। पुलकित अंग पढ़यौ थुतिपाठ॥
चैतबिरछजिनप्रतिमा जहां। महामहोच्छव कीनौं तहां २२५
यों बहु पुन्य उपायौ सही। फेरि आय निज सम्पति गही॥
दिव्यभोग मुंजे बड़भाग। लोकोत्तम जिस सहजसुहाग २२६
सोभनरूप प्रथम संठान। वसुवैक्रियक सुलच्छनवान॥
कोमल सुरभि सचिक्कन देह। सातधातवरजित गुनगेह२२७
पलकपात लोचनमैं नहीं। मलपसेव नख केस न कहीं॥
जरा कलेस न चिंता सोग। नाहीं अलप मृत्युभय रोग २२८
इत्यादिक दुखजोग अनेक। तिनमैं नहीं अमरके एक॥
आठरिद्धि अनिमादि पसत्थ। तिसबल सकलकाज समरत्थ
सुरग लोकके सुखकी कथा। कहै कहां लौं बुधवल जथा॥
बैठि मनोगत विमल विमान। विचरै नभपथ वांछितथान॥
कबही मेरु जिनालय गमै। कबही आन कुलाचल रमै॥
दीप समुद्र असंख अपार। करै सुरेंद्र सुछद विहार॥२३१॥
वर्ष वर्षमैं हर्ष बढ़ाय। तीन बार नन्दीसुर जाय॥
पंचकल्यानक समयसुजोग। करै तीर्थपदनमन नियोग२३२
और केवली प्रभुके पाय। दोय कल्यानक पूजै आय॥
निज कोठे थिर होय सुग्यान। करै दिव्यवानीरसपान२३३
सभासिंहासन बैठि सुरेस। देय सुरनप्रति हितउपदेस॥
करै तत्त्ववरनन विस्तार। अनेकांतवानी अनुसार॥ २३४॥
जे सुर सम्यकदरसनहीन। तपबल देव भये सुखलीन॥
तिनप्रति धर्मवचन उच्चरै। दरसनगुनकी प्रापति करै २३५

इहविध विविध करै सुभकाज। महापुन्य संचै सुरराज॥
दरसनग्यान रतनभंडार। चारित गुनकौ नहिं अधिकार २३६
धर्मवासनावासित जोग। करै पुनीत पुन्यफलभोग॥
कबहीं सुनै अपछरा-गान। निरखै नाटक निरुपम थान २३७
कबहीं सुभ सिंगाररसलीन। हाव भाव जोवै परवीन॥
कबहीं हास्यकथा विस्तरै। वनक्रीडा देविन सँग करै २३८
यौं नानाविध करत विलास। प्रतिदिन सुखसागरमैं बास॥
साढ़े तीन हाथ परवान। दिव्यसरीर अतुल द्युतिवान २३९
सागर बीस परमाथिति जास। बीस पच्छ पर लेय उसास॥
बीसहजार वर्ष अवसान। मनसा भोजन करै महान॥२४०॥
पंचम पिरथी लौं जिस सही। अवधिसकति जिनसासन कही
तावत मान विक्रियाखेत। सकलकाज साधनसुखहेत॥२४१॥
असंख्यात सुर सेवन पाय। देवीनेत्रकमलदिनराय॥
यों पूरवकृत पुन्यसँजोग। करै इंद्र इंद्रासन भोग॥ २४२॥

दोहा।

कहा इंद्रअहमिंद्र पद, जनम धरै फिर आय॥
जैनधर्म नृपकी धुजा, लोक-सिखर फहराय॥ २४३॥

इति श्रीमत्पार्श्वपुराणभाषाया आनन्दरायइन्द्रपदप्राप्तिवर्णन
नाम चतुर्थोऽधिकार।

# पाँचवाँ अधिकार।



दोहा।

बंदौं पारसपदकमल, अमलबुद्धिदातार ॥
अब बरनौं जिनराजके, पंच कल्यानक सार ॥ १ ॥

चौपई।

प्रथम अनंत अलोकाकास। दसौं दिसा मरजाद न जास ॥
दूजौ दरब जहां नहिं और। सुन्न सरूप गगन सब ठौर ॥२॥
तहां अनादि लोकाथिति जान। छीदे पाँय पुरुप-संठान ॥
कटिपै हाथ सदा थिर रहै। यह सरूप जिनसासन कहै ॥३॥
पौन पिंड वेढ़्यौ सरवंग। चौदह राजू गगन उतंग ॥
घनाकार राजू गन ईस। कहे तीन सौ तैंतालीस ॥ ४ ॥
जीवादिक छह दरब सदीव। तिनसौं भर्यौ जथा घट घीव
स्वयंसिद्ध रचना यह बनी। ना इस करता हरता धनी ॥५॥
दरब दृष्टिसौं ध्रौव्यसरूप। परजयसौं उतपतछयरूप ॥
जैसे समुद सदा थिर लसै। लहर न्याय उपजै अरु नसै ॥६॥
लोक-नाड़ि तिस मध्य महान। चौदह राजू व्योम उचान ॥
राजूमित चौड़ी चहुंपास। यह त्रसखेत जिनागम भास ॥७॥
याके बाहर जंगम जीव। समुदघात बिन नाहिं सदीव ॥
तामैं तीनौं लोक बिसाल। ऊरध मध्य और पाताल ॥८॥
सोलह स्वर्ग पटल बावन्न। नव ग्रीवक नव जान रवन्न ॥
अनुदिस और अनुत्तर येह। एक एक ही पटल गिनेह ॥९॥

ये सब त्रेसठ पटल बखान। सिद्धखेत सोहैं सिर थान॥
ऊरध लोक वसै इहि भाय। उत्तम सुरथानक सुखदाय॥
अधोलोकमैं बहु बिध भेय। सात नरक असुरादिक देव॥
मध्यलोक पुनि तीजौ तहां। असख्यात दीपोदधि जहां ११
तिनमैं सोभावंत सुहात। जंबूदीप जगतविख्यात॥
लच्छ महाजोजन विस्तार। सूरजमंडलकी उनहार॥१२॥
वज्रकोट जिस ओट अभंग। परिमित जोजन आठ उतंग॥
चारौं दिस दरवाजे चार। तिनके नाम लिखौं अवधार १३
विजय नाम पूरवमैं जान। वैजयंत दच्छिन दिस ठान॥
पच्छिम भाग जयंत दुवार। उत्तरमै अपराजित सार॥१४॥
लवन-समुद्र खातिकारूप। चहुदिस बेढ्यौ सजल सरूप॥
तहां सुदरसन मेरु महान। मध्य भाग सोमा असमान॥१५
अति उतग लख जोजन सोय। रिजुविमान जा ऊपर होय॥
सब सैलनमै ऊंचो यहै। ग्रीव उठाय किधौं इम कहै॥१६॥
करै कौन गिरि मेरी रीस। जिनपति न्हौन होय मुझ सीस॥
चारौ दिस चारौं गजदंत। नील निषधसौं लगे महंत १७
छह कुलपर्वत बडे विथार। पूरब पच्छिम दीरघ सार॥
आठ महागिरि दिग्गज नाम। मेरु निकट आठौं दिस ठाम
कनक वरन सोलह वच्छार। महाविदेहविषै छबिसार॥
कचनागिरि दीसै परवान। सीता सीतोदा तट थान॥१९॥
कुरु भूमाहिं जमक गिरि चार। नील निषधके निकट निहार
चार नाभिगिरि मिथ्या नाहिं। मध्यम जघनभोगभूमाहिं॥

विजयारध पर्वत चौंतीस। इतने ही वृषभाचल दीस ॥
ते मलेच्छमधिखंडनविखैं। चक्की जहां नांव निज लिखैं २१
यो गिरि दीपविषैं बरनये। ग्यारह अधिक एक सौ भये ॥
भद्रसाल बन दोय सुबास। पूरब अपर मेरुके पास ॥२२॥
दो तरु जबू-सेंभलतनैं। उत्तम भोगभूमिमैं बनैं ॥
छह द्रह बड़े कुलाचलसीस। पदम महापदमादिक दीस२३
बीस सरोवर और सुनेह। सीता सीतोदामधि तेह ॥
उत्तम मध्यम जघन विसेस। भोगभूमि छह कही जिनेस ॥
महादेस चौंतीस सुखेत। ऐरावत अरु भरत समेत ॥
इतनी ही नगरी परवान। आरजखंडमध्य थिर थान २५
उपसमुद्रकी सख्या यही। कछू विनासिक कछु थिर सही
पूरब दिस दो बाग महंत। देवारन्य दीपके अंत ॥ २६ ॥
ऐसे ही पच्छिम दिस दोय। भूतारन्य नाम तिन होय ॥
गंगादिक सरिता दसचार। चौंसठ महा विदेहमझार।२७।
बारह विपुल विभगा जेह। महानदी नब्बै सब येह ॥
इतने ही सब कुंड महान। जहा तरंगिनि उतरैं आन २८
सत्रह लाख सबन परिवार। सहसछानवै ऊपर धार ॥
यह सब जंबूदीपसमास। आगममैं विस्तार प्रकास ॥२९॥

दोहा।

यही कथन अंगनाविषै, बरन्यौ गनधर इस ॥
तीनलाख पदमैं सही, ऊपर सहस पचीस ॥ ३० ॥

चौपई।

यों अनेक रचना आधार। दीपराज राजै अधिकार॥
तहां मेरुके दच्छिन भाग। किधौं भूमितिय सुभग सुहाग३१
भरतखंड छहखड समेत। धनुपाकार विराजत खेत॥
तामैं सबसुखधर्मनिवास। कासीदेश कुसलजनवास॥ ३२॥
गांव खेट पुर पट्टन जहां। धन-कन भरे बसैं बहु तहां॥
निवसैं नागर जैनी लोय। दयाधर्म पालैं सब कोय॥ ३३॥
जिनमँदिर ऊंचे जिनमाहिं। नरनारी नित पूजन जाहिं॥
पद पद पुरपंकित पेखिये। उदवसथान (?) न कहि देखिये॥
नीर अगाध नदी नित बहैं। जलचर जीव जहां नित रहैं॥
मुनिजनभूषित जिनके तीर। काउसग्ग धरि ठाडे धीर३५
ऊंचे परवत झरना झरैं। मारग जात पथिक मन हरैं॥
जिनमैं सदा कदराथान। निहचल देह धरैं मुनि ध्यान३६
जहां बड़े निर्जनबनजाल। जिनमैं बहुविध बिरछ विसाल॥
केला करपट कटहल कैर। कैथ करोंदा कौंच कनैर॥३७॥
किरमाला कंकोल कल्हार। कमरख कंज कदम कचनार॥
खिरनी खारक पिंडखजूर। खैर खिरहटी खेजड मूर॥३८॥
अर्जुन अमली आम अनार। अगर अजीर असोक अपार॥
अरनी औंगा अरलू भने। ऊंबर अड अरीठा घने॥ ३९॥
पाकर पीपल पूग प्रियंग। पीलू पाटल पाढ़ पतंग॥
गोंदी गुड़हल गूलर जान। गांडर गुंजा गोरस पान॥४०॥

पंचा चीढ़ चिरोंजी फली । चंदन चोल चमेली मली ॥
जंड जँभीरी जामन कोट । नीम नारियल हीस हिगोट४
सौना सीसम सेंभल साल । सालर सिरस सदा फलजाल।
बांस बबूल बकायन बेर । बेत बहेडा बड़हल पेर ॥ ४२ ।
महुआ मौलसिरी मचकुंद । मरुवा मोसा करना कुन्द ॥
तूत तबोंलनि तींदू ताल । तगर तिलक तालीस तमाल ४
इहि विध रहे सरोवर छाय । सबही कहत कथा बढ जाय।
तहां साधु एकांत विचार । करैं पठनपाठनविधि सार॥४४।
बिविध सरोवर सीतल ठाम । पंथी बैठि लेहिं बिसराम ।
निर्मल नीर भरे मनहार । मानौं मुनिचित विगतविकार४५
सोहैं सफल सालके खेत । भये नम्र फलभारसमेत ॥
सज्जनजन ज्यों संपति पाय । छोड़ गुमान चलैं सिर नाय४६
केवलग्यानी करत विहार । जहां सदा सबसुखदातार ॥
अचारज चहुसंघसमेत । विहरमान भविजन हितहेत ॥४७॥
केई जहां महाव्रत लेहिं । भवदुखवास जलांजलि देहिं ॥
केई धीर उग्र तप करैं । ते अहिमिंद्र जाय अवतरैं ॥ ४८ ॥
केई श्रावकके व्रत पाल । अच्युत स्वर्ग बसैं चिरकाल ॥
केई कर जिनजग्य विधान । पावैं पुन्नी अमरविमान ॥४९॥
केई मुनिवरदानप्रभाव । भोगैं भोगभूमिकी आव ॥
अपुनीत सब ही विध देस । जहां जनम चाहैं अमरेस ५०
तहां बनारस नगरी बसै । देखत सुरनरमन हुलसै ॥
है प्रसिद्ध धरनीपर सोय । तीरथराज कहैं सब कोय ॥५१॥

सोभा जाकी कही न जाय। नाम लेत रसना सुचि थाय॥
जहां सरोवर नाना भांति। जिनके तीर तरोवर पाँति ५२
निजजीवन जीवन सुख देहिं। कमलसुवास सिलीमुख लेहिं
सोहैं सघन रवाने बाग। फले फूल फल बढ़्यौ सुहाग ५३
सजल खातिका राजै खरी। उठैं लहरि लोयन-गति-हरी॥
कोट उतंग कागुरे लसै। मानौं सुरगलोक दिस हँसै॥५४॥
ऊंच महल मनोहर लगैं। सुवरन कलस सिखर जगमगैं
अति उन्नत जिनमंदिर जहां। तिन महिमा वरनन बुध कहां
रतनबिंब राजै जिहिमाहिं। सिखर सुरग धुजा फहराहिं॥
कंचनके उपकरन समाज। आवैं भविजन पूजाकाज॥५६॥
जय जय सब्द सहितछबि छजै। किधौं धर्म-रयनायर गजै॥
नगरनारि नित वंदन जाहिं। जिनदरसनउच्छव उरमाहिं॥
भूषनभूषित सुंदर देह। मानौं सुभग अपछरा येह।
सब ग्रहस्थ साधैं षट कर्म। पालै प्रजा अहिंसा धर्म॥५८॥
दोष अठारहवर्जित देव। तिस प्रभुकौं पूजैं बहु भेव॥
चाह-चिहन-वरजित जो धीर। सोई गुरु सेवैं वरवीर॥५९॥
आदि अंत जे विगत विरोध। तेई ग्रंथ सुनैं मन सोध॥
सत्य सील गुन पालैं सदा। तातैं लोग सुखी सर्वदा॥६०॥

दोहा।

प्रजा बनारस नगरकी, नागर नीत सुजान॥
चार रतनके पारखी, लहिये घर घर थान॥ ६१॥

देव धर्म गुरु ग्रंथ ये, बडे रतन संसार।
इनकौं परखि प्रमानिये, यह नर-भव-फल सार ॥ ६२
जे इनकी जानैं परख, ते जग लोचनवान।
जिनकौं यह सुधि ना परी, ते नर अंध अजान ॥ ६३
लोचनहीनें पुरुषकौं, अंध न कहिये भूल ॥
उर लोचन जिनके मुँदे, ते आंधे निर्मूल ॥ ६४ ॥

चौपई।

इहि विध नगर बसै बहु भाय। सब सोभा वरनी नहिं जा
अस्वसेन भूपति बड़ भाग। राज करै तहाँ अतुल सुहाग
कासिपगोत्र जगतपरसंस। वंस-इख्वाक-विमल-सर-हंस ॥
तेजवंत दिनपति ज्यौं दिपै। प्रभुता देखि सचीपति छिपै
कलपतरोवर सम दातार। रतिपति लाजै रूप निहार ॥
रयनायर सम अति गभीर। पर्वतराज बराबर धीर ॥६७
सोम समान सबनि सुखदाय। कीरति-किरन रही जग छा
तीन ग्यानसंजुगत सुजान। परम विवेकी दयानिधान ६
जिनपदभक्ति धर्म-धन-वास। गुरुसेवारति नीतिनिवास॥
कला-चातुरी-बुधि-विग्यान। विद्या-विनय-संपदा-थान ६९
सकलसारगुणमानिककोष। उभयपच्छ निर्मल निर्दोष।
जिनसूरजउदयाचल राय। तिस महिमा बरनी किमि जाय७
वामादेवी नाम पवित्त। तिनके घर रानी सुभ चित्त ॥
निरुपम लावन सवगुनभरी। रूपजलधिवेला अवतरी ७

नखसिख सहज सुहागिनि नार। तीनलोकतियतिलक सिंगार
सकल सुलच्छनमंडित देह। भाषा मधुर भारती येह ॥७२॥
रंभा रति जिस आगे दीन। रोहिनिरूप लगै छबि छीन॥
इंद्रवधू इमि दीसै सोय। रविदुति आगे दीपकलोय ॥७३॥
जनमनहरपवढ़ावन एम। कातिक-चंद्र-चन्द्रिका जेम॥
सकल सार गुनमनिकी खानि। सीलसंपदाकी निधि जानि
सज्जनताकी अवधि अनूप। कला सुबुधिकी सीमारूप॥
नाम लेत अघ तजै समीप। महापुरुप-मुक्ताफल-सीप॥७५॥
त्रिभुवननाथ रतकी मही। बुधिबल महिमा जाय न कही॥
बहुविध दंपति संपतिजोग। करैं पुनीत पुन्यफलभोग ॥७६॥

उक्त च पट्पाहुडग्रन्थे आर्या—

तित्थयरा तप्पियरा हलहर चक्काई वासदेवाई।
पडिवास भोयभूमिय आहारो णत्थि णीहारो ॥७७॥

चौपई।

जिनवर जिनमाता जिनतात। वासदेव बलदेव विख्यात॥
चक्रीराय जुगलिया जोय। इन सबके मल मूत्र न होय॥७८॥

दोहा।

पूरब गाथाकौ अरथ, लिख्यौ चौपई लाय॥
पट्पाहुडटीकाविषै, देख लेहु इहि भाय॥७९॥

चौपई।

अब आगे भविजन मन थंभ। सुनो गर्भमंगलआनंद॥
एक दिना सौधर्म सुरेस। धनपति भांति दीनौं उपदेस ८०

आनतेंद्रकी थितिमैं सही। आयु छ मास शेष सब रही॥
तेवीसम अवतार महान। होसी नगर बनारस-थान ॥८१॥
अस्वसेन भूपतिके धाम। पचाचरज करौ अभिराम॥
यह सुरेंद्रने आज्ञा करी। सो कुबेर निज माथैं धरी ॥८२॥
चल्यौ तुरत लाई नाहिं बार। सोहै संग अमर-परिवार॥
हरषित अंग पिता घर आय। करी रतन-वर्षा बहुभाय ८३
जिनके तेज तिमिर नहिं रहै। नाना वरन प्रभा लहलहै।
ऐसे निर्मोलक नग भूर। बरसे नृपके आंगन पूर॥ ८४॥

दोहा।

नभसौं आवै झलकती, मनिधारा इहि भाय॥
सुरगलोक-लछमी किधौं, सेवन उतरी माय॥ ८५॥

चौपई।

साढे तीन कोड परवान। यौं नित बरसै रतन महान॥
सुरभि सुगंध कलपतरुफूल। बरसावैं सुर आनँदमूल ॥८६॥
गंधोदककी बरसा करैं। मानौं मुकताफल अवतरैं॥
प्रतिदिन देव-दुंदुभी बजै। किधौं महासागर यह गजै ८७
नंद वरद जयजय उच्चरैं। मात पिता प्रति सुर यौं करैं।
इहि विध पंचाचरज विलोक। जैनी भये मिथ्याती लोक॥

दोहा।

देवन किये छ मास लौं, पंचाचरज अनूप॥
देखि देखि परजा भई, आनँद अचरजरूप॥ ८९॥

चौपई।

यों अतिआनँदसौं दिन जाहिं। माता मगन सुखोदधिमाहिं
मानिकजटित मनोहर धाम। रत्नपलंक सेज अभिराम॥९०॥
मनिमय दीप जहां जगमगैं। अति सुगंध आवत अलि पगैं॥
करि चतुर्थ आनंद-सनानि। करै सयन जननी सुख मानि९१
पच्छिम रैन रही जब आय। सोलह सुपनैं देखे माय॥
तिनके नाम लिखौं अवलोय। पढ़त सुनत पातक छय होय

पद्धडी।

सुपनावलि सोलह सुनहु मीत। जिनराजजनमसूचक पुनीत।
ऐरावत हाथी प्रथम दीस। मदगीलो गंड विसाल सीस९३
देख्यौ डक्कारत वृषभराज। अतिउज्जल मोतीबरन भ्राज॥
देख्यौ पचानन धवलदेह। निज नाद करै ज्यौं सरद-मेह ९४
देख्यौ मनिआसनसोभमान। तहँ हेमकलस कमला-सनान॥
देखी दो पावन पहुपमाल। भ्रमरावलि-बेढ़ी अतिविसाल
रविमंडल देख्यौ तम दलत। उदयाचल ऊपर उदयवत।
संपूरन तारापति-विमान। तारावलि मध्य विराजमान ९६
जलतिरत मनोहर मीन-जोट। देखे जिन-जननी पलकओट
देखे चामीकरकलस दोय। अति झलकै वारिजढँके सोय९७
देख्यौ कमलाकर कमलछन्न। बहु हंसी हसनसौं रवन्न॥
देख्यौ रयनायर गर्जमान। पुनि सिंहपीठ मानिकनिधान॥
फिर देख्यौ देव-विमान जोग। धुज घंटा झालरसौं मनोग
प्रगट्यौ महि फोरि फनींद्रधाम। मनि कंचनमय नयनाभिराम

पुनि रतनरासि देखी अनूप। इंद्रायुधवरन विचित्ररूप ॥
निर्धूम धनंजय दीपमान। ये देखे सोलह सुपन जान १००

दोहा।

गजप्रवेस मुखकमलमैं, सुपनअंत अविलोय ॥
सुखनिद्रा पूरी भई, भयौ प्रात तम खोय ॥ १०१ ॥
पूर्व दिवाकर ऊगयौ, गयौ तिमिर दुखदाय ॥
जैसे जैनसिधांत सुनि, भरमभाव मिट जाय ॥१०२॥
मंद तेज तारे भये, कछु दीखैं कछु नाहि।
ज्यों तीर्थंकरके उदय, पाखंडी छिप जाहि ॥१०३॥
सूरजवंसी जे कमल, खिले सरोवरमाहिं।
ज्यों जिनबिंब विलोकिकै, भविलोचन विकसाहिं १०४
चंदविकासी कमल जे, विकसत भये न सोय।
ज्यो अजान जिनवचन सुनि, मुदित मूल नहि होय१०५
चक्रवाक हरखित भये, ज्यो जिनमत-संजोग ॥
जीव सुमति पिय-नारिकौ, मिट्यौ अनादिवियोग १०६
घूघूगण भूतलविषै, आंधे भये असूझ ॥
जैनग्रन्थके रहसमैं, ज्यों परमती अबूझ ॥ १०७ ॥
कमलकोष मधुकर बँधे, छुटे जग्यौ सिर-भाग।
जथा जीव जिनधर्मसौं, मुक्त होय भवत्याग ॥१०८॥
पथिक लोग मारग चले, सूझे घाट कुघाट।
जिनधुनि सुनि सूझै जथा, सुरग मुकतिकी बाट॥१०९॥

इहि विध भयौ प्रभात सुभ, आनँद भयौ अतीव ॥
धर्मध्यान आराधना, करन लगे भवि जीव ॥११०॥

जिनजननी रोमाच तन, जगी मुदित मुख जान।
किधौं सकटक कमालिनी, विकसी निसि अवसान १११

मंगलीक वाजित्र धुनि, सुनि बंदीजन-गान।
उठी सेज तजि सुखभरी, धर्यौ हियैं सुभ ध्यान ॥११२॥

सामायिकविध आदरी, पंच परमपदलीन।
और उचित आचार सब, स्नान-विलेपन कीन ॥ ११३ ॥

पहरे सुभ आभरन तन, सुंदर वसन सुरंग।
कलपबेल जंगम किधौं, चली सखीजन संग ॥ ११४ ॥

राजसिंहासन भूप तब, बैठे सभा-सुथान।
देवी आवत देखकै, कियौ उचित सनमान ॥ ११५ ॥

अर्धासन बैठानि दियौ, जोग वचन मुख भास।
यों रानी विकसत वदन, बैठी भूपति पास ॥ ११६ ॥

सभालोग तारे विविध, भूपति चांद सरूप ॥
श्रीवामादेवी तहां, दिपै चंद्रिकारूप ॥ ११७ ॥

स्वामी सोलह सुपन हम, देखे पच्छिम रैन।
श्रीमुखतैं इनकौ सुफल, कहौ श्रवनसुखदैन ॥ ११८ ॥

अस्वसेन भूपाल तब, बोले अवधि विचार।
एकचित्त करि देवि तुम, सुनो सुपनफल सार ॥ ११९ ॥

चौपई।

धुरि गजेंद्रदरसनतैं जान। होसी जगपति पुत्र प्रधान॥
महावृषभ पुनि देख्यौ सोय। जगजेठो नंदन तुम होय १२०
सेत सिंह-दरसनफल भास। अतुल अनंती सकति-निवास॥
कमलामज्जनतैं सुरईस। करै न्हौन कनकाचलसीस॥१२१॥
पहुपदाम दो देखीं सार। तिसफल दुविध धर्मदातार॥
ससितैं सकल लोकसुखदाय। तेजपुंज सूरजतैं थाय॥१२२॥
मीन जुगलतैं सब सुखभाज। कुंभविलोकनतैं निधिराज॥
सरवरतैं सब लच्छनवान। सागरतैं गंभीर महान॥ १२३॥
सिंहपीठतैं मृगलोचनी। होय बाल तुम त्रिभुवनधनी॥
सुरविमान देख्यौ सुख पाय। सुरगलोकतैं उपजै आय १२४
नागराज-गृहकौ सुन हेत। जनमै मतिस्रुतिअवधिसमेत॥
रतनरासिसैं गुन-मनि-खान। कर्मदहन पावकतैं जान॥१२५॥
गजप्रवेस जो वदनमझार। सुपन-अंत देख्यौ वरनार॥
श्रीपारसजिन जगतप्रधान। गर्भ तुम्हारे उतरे आन॥१२६॥

दोहा।

सुनि वामादे सुपनफल, रोमाचित तन भूर॥
सुवचन-जल सींचत किधौं, उगे हरष अंकूर॥ १२७॥

चौपई।

अब सौधर्म सुरेस विचार। स्वामिगर्भअवसर निरधार॥
कुलगिरि-कमलवासिनी जेह। श्रीआदिक देवी गुनगेह १२८

तिन्हैं बुलाय कह्यौ सुभ भाव। अस्वसेन भूपति घर जाव॥
वामादेवीके उरथान। तेवीसम जिन उतरे आन॥ १२९॥
तिनकी गर्भसौधना करो। निज नियोगसेवा मन धरो॥
यह सुनि सब आनंदित भई। इंद्रआन माथे धर लई॥१३०॥
सुरगलोक तजि आईं तहां। बसै बनारासि नगरी जहां॥
महाकांत तन लावनभरी। मानौं नभदामिनि अवतरी १३१
अंग अंग सब सजे सिंगार। रूपसंपदा अचरजकार॥
चूडामनि माथे जगमगै। देखत चकाचौंध सी लगै॥१३२॥
सुरतरुसुमनदाम उर धरी। अति सुवास दसदिसि विस्तरी॥
श्रवनसुखद नेवर-झंकार। सोभा कहत न आवै पार॥१३३
आय नृपतिके पायन नईं। आयस मांगि महलमैं गईं॥
सिंहासनथित माय निहार। करि प्रनाम कीनो जैकार १३४

दोहा।

जननीदेह सुभावसौं, अतिनिर्मल अविकार॥
ताहि कुलाचलवासिनी, और करे सुचि सार॥१३५॥
कृष्णपाख वैशाख दिन, दुतिया निसि-अवसान।
विमल विशाखा नखतमे, बसे गर्भ जिन आन॥१३६॥
जथा सीपसपुटविषैं, मोती उपजै आन।
त्योंही निर्मल गर्भमै, निराबाध भगवान॥ १३७॥
गर्भ बसैं पर-गर्भतैं, वरतै भिन्न सदीव॥
घटतैं घटवरती गगन, क्यो नहिं भिन्न अतीव॥१३८॥

चौपई।

तब जिन पुन्यपवनसे हले । चउविध सुरके आसन चले ॥
चिहनदेख इंद्रादिकदेव। जानो अवधिज्ञानबल भेव ॥१३९॥
जिनवर आज गर्भ अवतरे । यह विचार उर आनंद भरे ॥
चढ़ि विमान परिवारसमेत । चले गर्भकल्यानक हेत १४०
जयजयकार करत बहुभाय । उच्छवसहित पिताघर आय॥
मातपिता आसन पर ठये । कंचनकलस नहावत भये १४१
गर्भमध्यवरती भगवान । प्रनमैं देव धरो मन ध्यान ॥
गीत निरत बाजित्र बजाय । पूजा भेट करी सिर नाय १४२
यो सुरगन सब साधि नियोग । गये गेह करि कारज जोग
इन्द्रराजकौ आयस पाय । रुचकवासिनी देवी आय १४३
जथाजोग सब सेवा करैं । छिन छिन जिनजननीमन हरैं ॥
रुचक दीप तेरहमो जहाँ । रुचकनाम पर्वत है तहाँ १४४
सो चौरासी सहस प्रमान । इतने जोजन उन्नत जान ॥
इतनो ही विस्तीरन धार । दीप मध्यसों बलयाकार १४५
ताके सिखर कूट बहु लसैं । दिसाकुमारी तिनमैं बसैं ॥
ते सब सेवन आवैं माय। यह नियोग इनकौ सुखदाय १४६

कुसुमलता।

आईं भक्ति नियोगिनि देवी, जिन जननीकी सेव भजैं ।
कोई न्हान-विलेपन ठानैं, कोई सार सिंगार सजैं ॥१४७॥
कोई भूपण वसन समर्प्पैं, कोई भोजन सिन्धू करैं ।
कोई देय तंबोल रवाने, कोई सुंदर गान करैं ॥ १४८ ॥

कोई रतन सिहासन थापै, कोई ढालैं चमर खरो।
कोई सुन्दर सेज बिछावैं, कोई चापैं चरन करो ॥ १४९ ॥
कोई चन्दनसौं घर सींचैं, सारे महल सुवास करी ॥
कोई आंगन देय बुहारी, झारै फूल-पराग परी ॥ १५० ॥
कोई जलक्रीडा कर रजैं, कोई बहुविध भेप किये।
कोई मनिदर्पन कर धारै, कोई ठाडी खड्ग लिये ॥१५१॥
कोई गूंथि मनोहर माला, आवैं आन सुगंध खरी।
कोई कलपतरोवरसौं ले, फल फूलनकी भेट धरी॥ १५२॥
कोई काव्य कथारसपोखैं, कोई हास्य विलास ठवैं।
कोई गावैं बीन बजावैं, कोई नाचत सीस नवैं ॥ १५३ ॥

दोहा।

इह विध सेवा करत नित, नवैं मास सुभ स्रेय।
प्रस्न करैं सुरकामिनी, माता उत्तर देय ॥ १५४ ॥
अंतरलापि पहेलिका, बहिरलापिका एव।
बिंदुहीन निरहोठपद, क्रियागुप्त बहुभेव ॥ १५५ ॥
इत्यादिक आगमउकत, अलंकारकी जात।
अर्थगूढ़ गंभीर सब, समझावैं जिन-मात ॥ १५६ ॥

चौपई।

तुमसी त्रिया कौन जग आन। तीर्थंकर सुत जनै महान ॥
जगमैं सुभट कौनसे माय। जे नर जीतैं विषय कषाय१५७
कौन कहावै कायर दीन। इन्द्रीमदमेटन बलहीन ॥
पंडित कौन सुमारग चलै। दुराचार दुर्मारग दलै॥ १५८॥

माता मूरख कौन महंत। विषयी जीव जगत जावंत।
कौन सत्पुरुष नरभव धार। जो साधै पुरुषारथ चार॥१५९॥
कौन कापुरुष कहिये मर्म। जो सठ साध न जानै धर्म॥
धन्य कौन नर इस संसार। जोवन समै धरै व्रतभार॥१६०॥
धिक किनकौं कहिये सर्वंग। जे धरि करैं प्रतिग्या भंग॥
कौन जीवके वैरी लोय। काम क्रोध हैं और न कोय १६१
जननी जगमैं कौन मलीन। पातकपंकमलिन मतिहीन॥
कहो कौन नर नित्त पवित्त। ब्रह्मचर्यधारी दिढ चित्त १६२
कौन पसू मानुष आकार। जिनके हिरदै नाहिं विचार॥
अंध कौन जो देव अदेव। कुगुरुसुगुरुकौ भेद न भेव १६३
बधिर कौनसे उत्तर देह। जैनसिधाँत सुनै नहिं जेह॥
मूकनाम नर कैसैं लहै। जो हित सांच वचन नहिं कहै१६४
लाँबी भुजा कौन करहीन। जिनपूजा मुनिदान न दीन॥
कौन पाँगले पाँवसमेत। जे तीरथ परसैं न अचेत॥१६५॥
कौन कुरूप जनानि कहु एह। सीलसिंगार बिना नरजेह॥
वेग कहा करिये बड़भाग। दिच्छागहन जगतकौ त्याग॥
मित्र कौन हितवंचक होय। धर्म दिढ़ावै आलस खोय॥
सत्रु कौन जो दिच्छालेत। विघन करै परभवदुखहेत १६७
जियकौ कौन सरन है माय। पंचपरमगुरु सदा सहाय॥
इहिविध प्रस्न करैं सुरनारि। माता उत्तर देहिं विचारि१६८
वामादेवी सहज प्रवीन। सकल मरम जानै गुनलीन॥
पुरुषरतन उरअन्तर वहै। क्यों नहिं ग्यान अधिकता लहै१६९

दोहा।

निबसैं निर्मल गर्भमैं, तीन ग्यान-गुनवान।
फटिकमहलमैं जगमगैं, ज्यो मनि दीप महान॥ १७०॥
उदयवान दिनकरसमय, पूर्व दिसा छवि जेम।
त्रिभुवनपति-सुत उर धरैं, सोहत जननी एम॥ १७१॥
गर्भभार ब्यापै नही, त्रिबली भंग न होय।
देह न दीखै पीतछवि, और विकार न कोय॥ १७२॥
ज्यों दर्पन प्रतिबिंबसौं, भारी कह्यौ न जाय।
त्यो जिनपतिके गर्भसौं, खेद न पावै माय॥ १७३॥
कलपलतासी लसत अति, जननी छविसंयुक्त।
मदहास कुसुमित भई, अब फलि है फल पुत्त॥ १७४॥
देवराजके वचनसौं, अहनिस हरखत अंग॥
अलखरूप सेवै सची, लिये अपछरा संग॥ १७५॥
पूरबवत नवमास लो, पंचाचरज अनूप॥
अस्वसेन भूपालघर, किये धनद सुखरूप॥ १७६॥
यों सुखसौं निसदिन गये, खेद नामकहिं नाहिं॥
यह सब पुन्य-प्रभाव है, यही रहस इसमाहि॥ १७७॥

इतिश्रीपार्श्वपुराणभाषाया गर्भावतारवर्णनं नाम पञ्चमोऽधिकार।

# छठा अधिकार।



दोहा।

रागादिक जलसौं भर्‌यौ, तन तलाव बहु भाय।
पारस-रवि दरसत सुखै, अघ सारस उड़ि जाय ॥ १ ॥
गर्भ मास पूरन भये, नभ निर्मल आकार।
पौष मास एकादसी, स्याम पच्छ सुभ बार ॥ २ ॥
वामादेवी-पूर्व-दिसि, जनम्यौ जिनवर भान।
मुदित भयौ त्रिभुवनकमल, असुभतिमिर अवसान ॥३॥
अस्वसेन नृप उदयगिरि, उगयौ बाल दिनेस।
तीन ग्यान-किरनावली, लिये जगत परमेस ॥ ४ ॥

पद्धडी।

जनम्यौ जब तीर्थंकर कुमार। तिहुँलोक बढ्यौ आनँदअपार
दीखै नभनिर्मल दिसि असेस। कहिं आंधी मेह न धूलि लेस
अति सीतल मंद सुगंधि वाय। सो बहन लगी सुखसांतिदाय
सब सुजनलोक हरषे विसेस। ज्यों कमल-खंड प्रगटत दिनेस
घंटा घन गरजे देवलोक। ज्योतिषिघर केहरिनाद थोक ॥
भवनालय बाजे सहज संख। बितर-निवास भेरी असंख ७
ये अनहद बाजे बजे जान। जिनराज जनमअतिसय महान
बहु कलपतरोवर पहुपवृष्टि। स्वयमेव करन लागे विसिष्ट ८
इंद्रासन कांपे अकसमात। ये करन किधौं सारथ (?) सुजात
जिनजनम भयौ भूलोकमाहिं। उच्चासन अब तुम जोग नाहि

आनम्र भये मुनिमुकुट एम । श्रीजिनभति करत प्रनाम जेम
ये चिहन देखि इंद्रादिदेव । तव अवधिग्यानबल जान भेव॥
निरधार बनारसि-नगर-थान । तीरथपति जनम्यौ आज आन
प्रभुजन्मकल्यानककरनकाज । उद्यम आरम्यौ देवराज ११
परिवारसहित सब इंद्रनाम । आये मिलि प्रथमसुरेंद्रधाम ॥
नानाविध वाहन चढ़े जेह । जिनभगतिसलिलसिंचतसुदेह
सतांग सैन तब चली एम। यह महाजलधिकी लहर जेम ॥
हाथी रथ पायक वृषभ बाज । गायनि नर्तकि सेनासमाज
एकेक सैनमैं सात कच्छ। तिहिमाहि प्रथम चउ असी लच्छ
फिर दुगुन दुगुन सात लौ जान । इस भात सात सेना महान
सौ कोर और छैकोर जोरि । अठसट्ठ लाख ऊपर बहोरि ॥
यह एकहस्ति सेनाप्रमान । ऐसी ही सब सातौं समान १५
तहँ नागदत सुर आभियोग। सो करह विक्रिया निजनियोग॥
ताप्रति आग्या दीनी सुरिंद । तिन कीनौं ऐरावत गइन्द १६
लख जोजन मान मतंगईस । अतिउन्नत देह उतंग सीस ॥
सुभसेतवरन मनहरन काय । लीलागति धारै ललित पाय१७
मदजीवनकलित कपोल स्याम। नख विद्रुमवरण मनोभिराम
सब लसत सुलच्छन अगअग। नहि गिनीजाहिजिसछबितरंग
गभीर घनाघनघोष जास । बहु सुदर सुड सुगंध सास ॥
सो कामसरूपी कामगौन । जादेखै मोहत तीन भौन ॥१९॥
घनघोरत घटा लबमान । मानि घूंघुरमाला कठथान ॥
सोवनपाखर (?) सो दिपै देह । सपाजुत मानौ सरद मेह २०

सौ वदन विराजत सोभवंत । एकेकवदनमैं आठ दंत ॥
प्रतिदंत सरोवर एक दीस । सरसरहँ कमलिनी सौपचीस २१
एकेक कमलिनी प्रति महान । पचीस मनोहर कमल ठान॥
प्रतिकमल एकसौ आठपत्र । सोभावरनी नहिं जाय तत्र२२
पत्रनपर नाचें देवनारि । जगमोहत जिनकी छवि निहारि
नव नवरस पोषैं करत गान । लावन्यजलधि-वेलासमान२३
तिस हाथी ऊपर सचीसंग । सौधर्मसुरगपति मुदितअंग ॥
आरूढ भयौ अति दिपत एम । उदयाचलमस्तक भानु जेम
चंद्रोपम चामर छत्रसीस । दसजाति कलपसुरसहित ईस ॥
ईसानप्रमुख इमि देवराज । निज निज वाहनकौं चले साज ॥
परिजनसमेत उर हरषभाव। जिन जनमकल्यानक करन चाव
बाजे सुरदुंदभि विविध भेव। जयकार करैं मिलि सकल देव२६
उपज्यौ कोलाहल गगन थान। सब दिसि दीसैं वाहन विमान
आकाससरोवर अतिगँभीर। इंद्रादि अमर तन तेज नीर॥२७॥
तहां विकसत मुख अपछरा एम। यह खिल्यौकमलिनीबागजेम
इहि विध देवागम भयौ जान। अवतरे बनारस नगर थान।२८।
चंद्रादि जोतिषी पच जात। दस भेद भवनवासी विख्यात ॥
पुनि आठ जातके वान देव। सब आये इन्द्र समेत एव ॥ २९ ॥
निज निज वाहन चढ़ि सपरिवा। जिनजन्म-महोच्छवहियैंधार
तव पुरप्रदच्छिना सुरन दीन। अतिहरखत उर जयकार कीन
वन वीथी मारग गगन रोक। सब ठाडे देवी देव थोक ॥
सब सक्र सची मिलि भूप गेह। आये घर आगन भरो तेह ३१

ाव इंद्रवधू अति रंजमान। सो गई गुपत जिनजनमथान ॥
ेखी जिनमात सपुत्त ताम। परदच्छिन दै कीनौं प्रनाम ३२
ुल-रागरँगी सुखसेजमांझ। ज्यो बालक-भानुसमेत सांझ ॥
कर जोरि जुगल सिर नाय नाय। थुति कीनी बहु जानैं न माय
ुखनींद रची तब सची तास। मायामय राख्यौ पुत्र पास ॥
करकमलन बालक-रतन लीन। जिन कोटिभानुछबि छीन कीन
ुख उपजै जो प्रभु परस देह। कवि-बानीगोचर नाहिं तेह ॥
प्रभुकौ मुखवारिज देख देख। हरखै सुररानी उर विसेख॥३५॥
वसु मंगलदरव विभूति सार। दिसदिव्यकुमारी अग्रचार ॥
इहिविध सौधर्मसुरेसनार। आन्यौ सिवकन्या-वर कुमार ३६
देख्यौ हरि बालकचंद जाम। आनंदजलधि उर बढ्यौ ताम ॥
सिर नाय इन्द्र निज बार बार। थुति कीनी कर जुग सीस धार॥
छबि देखि तृपति नहिं होय लेस। तब सहस आंख कीनी सुरेस
करि नमस्कार निजगोद लीन्ह। ईसान इंद्र सिर छत्र दीन्ह ॥
तहॉ सनतकुमार महेंद्र सोय। ए चामर ढालैं इंद्र दोय ॥
ब्रह्मादि सुरगवासी सुरेस। जय नंद वर्ध बोलैं विसेस ॥ ३९ ॥
नाचैं सुर-रमनी रूपखान। गंधर्व करैं जिनसुजसगान ॥
सुरबाजे बाजैं बहुपकार। कर धरहिं किन्नरी बीन सार॥४०
केई सुर श्रीजिनसुभगभेष। देखैं भरि लोचन निर्निमेष ॥
केई यौं भाषैं सुरसमाज। हम देवजन्मफल लह्यौ आज ४१
केई सरधायुत भये देव। मिथ्यात महाविष वम्यौ एव ॥
इस भांति चतुरविध देवसंघ। सब चले जोतिषीपटल लंघ॥

दोहा।

जोजन सहस निन्यानवै, सुरगिरि-सिखर उतंग।
गये सकल सुरगन तहां, भूपनभूपित अंग ॥ ४३ ॥

चौपई।

महामेरुके मस्तकभाग। पांडुकवन बहु धरै सुहाग ॥
जोजन सहस जासु विस्तार। सुर चारन खग करैं बिहार४४
चहुंदिसि चार जिनालय तहां। सघन सासते तरुवर जंहां
मध्यचूलिका मुकट सरीस। सो उतंग जोजन चालीस॥४५॥
बारह जोजन जड़ विस्तार। आठमध्य अर ऊपर चार ॥
जाके ऊपर रजकविमान। रोमांतर नरछेत्रममान ॥ ४६ ॥
तिस ईसानदिसा सुभ थान। मनिमय सिला सासती जान
पांडुकमाम फटिक उनहार। आकृति अर्ध चंद्रमाकार ४७
सौ जोजन आयाम अभंग। विस्तर आधी आठ उतंग ॥
सुरविद्याधर पूजत नित्त। भरतखंड-जिन-न्हौन-पवित्त ॥
तहां हेम-सिंहासन सार। रत्नजड़ित सो बलयाकार ॥
धनुप पांचसौ उन्नत जोय। भूमिभाग विस्तीरन सोय॥४९॥
ऊपर जास अर्ध बिस्तार। जाके तेज मिटै अँधियार ॥
तिसहीपर पदमासन साज। पूरवमुख थापे जिनराज ॥५०॥
इस औसर सोहैं इमि ईस। मानौ मेव रतनगिरि सीस ॥
धुजा कलस दर्पन भृंगार। चमर छत्र सुप्रतिष्ठक तार ॥५१॥
मंगल दर्व मनोहर जहां। धरे अनादि-निधन ये तहां ॥
आसन दोय उभय दिस और। जुगलइंद्र ठाडे तिहि ठौर॥५२॥

चारौं दिस चारौं दिगपाल । जथाजोग जिनमज्जनकाल ॥
सची सुरेंद्र अपछरा-थोक । सब ठाढ़े पांडुकवन रोक ॥५३॥
चौविध देव खड़े चहुंपास । जनम-न्हौन देखन हुल्लास ॥
कियौ महामंडप हरि तहां । तीनलोक जन निवसैं जहां ॥५४॥
कलपकुसुममाला मनहार । लटकैं मधुप करैं झंकार ॥
सुर वाजित्र वजैं बहुभाय । सुरभि सुगंध रही महकाय ॥५५॥
मंगल मिल गावैं सब सची । नाचैं सुर-वनिता रस-रची ॥
तब मज्जन आरंभ विसेस । उद्यम कियौ प्रथम अमरेस ॥५६॥

दोहा।

तहां कुवेर रतन खची, रची पैंडका पंत ।
मेरु सिखरसौं सोहिये, छीरोदधिपरजंत ॥ ५७ ॥
सुर-श्रेणी सोपान-पथ, पंचम सागर जाय ।
भर लाई कचन-कलस, चंदन-चरचित काय ॥ ५८ ॥
जोजन एक प्रमान मुख, वसु जोजन गभीर ।
यह मरजादा कलसकी, जिनशासनमैं वीर ॥ ५९ ॥
मुकतमालमंडित लसैं, कचन-कलस महंत ॥
नभवनिताके उरज ये, यों अति सोभावंत ॥ ६० ॥

चौपई।

सहस भुजा सुरपति तव करी । भूषनभूषित सोभा भरी ॥
इस औसर हरि सोहैं एम । भूषनाग सुरतरुवर जेम ॥ ६१ ॥
कलस हाथ हरि लीनैं जाम । भाजनाग सम सोभा ताम ॥
तीन बार कीनौ जयकार । कलसोद्धारन मंत्र उचार ॥६२॥

इहिविध श्रीसौधर्माधीस । ढाले कलस स्वामिके सीस ॥
तब सब इंद्र कियौ जिनन्हौन । अतुल उछाव बढ्यौ जगभौन
महा धार जिनमस्तक ढरी । मानौं नभगंगा अवतरी ॥
मुदित असंख अमरगन तबै । जैजैकार कियौ मिलि सबै ६४
उपज्यौ अति कोलाहल सार । दसदिस बधिर भईं तिहिं बार ॥
भयौ असम औसर इहिं भाय । वचनद्वार बरन्यौ नहि जाय ॥

दोहा ।

जाधारासौं गिरिसिखर, खंड खंड हो जाय ।
सो धारा जिनदेहपै, फूल-कली सम थाय ॥ ६६ ॥
अप्रमान वीरजधनी, तीर्थंकर प्रभु होय ।
तातैं तिनकी सकतिकौं, उपमा लगै न कोय ॥ ६७ ॥
नीलबरन प्रभु देहपर, कलस-नीरछबि एम ।
नीलाचलसिर हेमके, बादल बरसैं जेम ॥ ६८ ॥
चली न्हौनके नीरकी, उछल छटा नभमाहि ॥
स्वामिसंग अघबिन भई, क्यो नहि ऊरध जाहि ॥ ६९ ॥
न्हौनछटा तिरछी भई, तिन यह उपमा धार ।
दिगवनिता-मुख सोहियै, करनफूल उनहार ॥ ७० ॥

सोरठा

जिनतनपरस पवित्त, भई सकल जगसुचिकरन ॥
सो धारा मम नित्त, पाप हरो पावन करो ॥ ७१ ॥

चौपई ।

यो सुरेंद्र मज्जनबिधि ठान । फिर कीनौं गंधोदकन्हान ॥
सो जल लेय विनय विस्तरी । सांतिपाठ पढि पूजा करी ७२

सक्र सची सुर आनंद भरे। यथाजोग सब कारज करे॥
परदच्छिन दीनी बहुभाय। बारंबार नये सिरनाय॥ ७३॥

हरिगीत।

सौधर्मपति अभिषेक कारक, न्हौनपीठ सुदंसनो।
गंधर्व गायक निरतकारक, अपछरा-जन ससनो॥
पंचम पयोनिध न्हौन-कुंड, असख सुर सेवक जहां॥
तिस जन्ममंगलकी बड़ाई, कहन समरथ बुध कहां॥७४

चौपई।

जन्महौनविधि पूरन भई। सकल सुरासुर देवानि दई॥
अब इंद्रानी जिनवर अंग। निर्जल कियौ वसन-सुचिसंग ७५
कुकुमादि लेपन बहु लिये। प्रभुके देह विलेपन किये॥
इहि सोभा इस औसरमाझ। किधों नीलगिरि फूली सांझ ७६
और सिंगार सकल सह कियौ। तिलक त्रिलोकनाथके दियौ॥
मनिमय मुकुट सची सिर धरचौ। चूडामनि माथे विस्तरयौ७७
लोचन अंजन क्रियौ अनूप। सहज स्वामिहग अंजितरूप॥
मनि कुंडल कानन विस्तरे। किधों चंद सूरज अवतरे॥७८॥
कंठ कंठिका मोतीहार। मुकतामनि झूला उनहार॥
भुजभूषनभूषित भुज करी। कटक मुद्रिका सोभित खरी ७९
कटिभूषन कीनौं कटि-थान। मनिमयछुद्रघटिकावान॥
पग नेवर पहराये सार। जिनम रतन झलक झकार॥८०॥

दोहा।

अंगअंग आभरनजुत, यह उपमा तिहिं काल॥
सुरतरुसम प्रभु सोहिये, भूषनभूषित-डाल॥ ८१॥

धनि धनि अस्वसेन भूपाल । जिनके जगगुरु जनम्यौ वाल ॥
कीरतवेल अधिक तुम वढ़ी। तीनलोकमंडप सिर चढ़ी १०२
धनि वामादेवी जगमाय । जिन जायौ नंदन जगराय ॥
तीनलोकतियसृष्टिसिंगार । धनि जननी तेरो अवतार १०३
तुम सम जगमैं और न आन । जिनदेवल सम पूज्य प्रधान ॥
यों थुतिकरि हरि हिये प्रमोद । बाल दिवाकर दीनौं गोद
कही सकल पूरवली कथा । मेरु महोच्छव कीनौं जथा ॥
तब निज नगरविषैं भूपाल । जन्म उछाह कियौ तिहिंकाल
हरषत सब पुरजन परिवार । घर घर भये मंगलाचार ॥
घर घर कामिनि गावैं गीत। घर घर होय निरत-सगीत१०६
मंगलीक बाजे बहु भेव । बाजन लगे सकल सुरदेव ॥
श्रीजिनभवन न्हौन विस्तार । किये सकल मंगल आचार
छिरक्यौ चंदन नगरमंझार । रतन साथिया धरे सँवार ॥
जाचक-दान सुजन सनमान । जथाजोग सब रीति विधान॥
इहि विध अस्वसेन नरनाह । कीनौ पुत्र-जनमउच्छाह ॥
पूरनआस भये सब लोय । दुखी दीन दीसै नहिं कोय १०९

दोहा।

उदय भयौ जिनचंद्रमा, कुलनभतिलक महंत ॥
सुखसमुद्रबेला तजी, बढ़्यौ लोक-परजंत ॥ ११० ॥

चौपई।

तब बहु देवनसंग विसेस । आनंद-नाटक ठयौ सुरेस ॥
करैं गान गंधर्व-समाज । समयजोग सब बाजे साज ॥१११॥

देखैं अस्वसेन नरनाथ। पुत्रसहित सब परिजन साथ॥
प्रथमरूप नव भव दरसाय। पुहपांजुलि खेपी सुरराय ११२
ताडव नाम निरत आरंभ। कियौ जगतजन करन अचंभ॥
नट सरूप धार्यौ अमरेस। रंगभूमि कीनौं परवेस॥११३॥
मंगलीक सिंगार सवार। सब संगीत वेद अनुसार॥
ताल मान विधिसहित सुभाय। रंग-धरा पर फेरै पाय११४
करैं कुसुमबरसा नभ देव। देखि इन्द्रकी भक्ति सुभेव॥
बीना मुरज बांसली ताल। बाजे गेह गीतकी चाल ११५॥
करैं किनरी मंगलपाठ। बिरियां जोग बन्यौ सब ठाठ॥
नाचै इंद्र भमै बहु भाय। मोरै हाथ कंठ कटि पाय॥११६
अद्भुत तांडवरस तिहि वार। दरसावै जन अचरजकार॥
सहस भुजा हरि कीनी तबै। भूषनभूषित सोहैं सबै॥११७॥
धारत चरन चपल अति चलैं। पहुमी कांपै गिरिवर हलैं॥
भमै मुकुट चक्रफेरी लेत। ताकी रतनप्रभा छवि देत ११८
बलयाकृति ह्वै झलकै सोय। चक्राकार अगनि जिमि होय
छिनमैं एक छिनक बहुरूप। छिन सूच्छम छिन थूलसरूप
छिनमैं निकट दिखाईं देय। छिनमैं दूर देह धर लेय॥
छिनआकासमाहिं संचरै। छिनमैं निरत भूमि पर करै १२०
छिन छूवै तारावलि जाय। छिनक चंदसौं परसै काय॥
इंद्रजालवत यों अमरेस। दरसाई निज रिद्धिविसेस॥१२१
हाथ अंगुलिनपै अपछरा। नाचैं रूप रतनकी धरा॥
अंग अंग भूषन झलकाहिं। विकसत लोचन मुस मुसकाहिं॥

निरत-भेदविधि धारैं पांव । करैं कटाच्छ दिखावैं भाव ॥
बहुविधकला प्रकासैं सार । सुरकामिनि दामिनिउनहार ॥
तिनसंजुत हरि सुरतरु एम । कलपलतागनवेढ़्यौ जेम ॥
यों नाटकविधि ठान अनूप । तिहुंजग सक्र किये सुखरूप ॥
स्वामिजनम-अतिसयपरताप । जिनवरपिता सभापति आप॥
इंद्र महानट नाचै जहां । तिस अवसर-बरनन बुधि कहां ॥
तब तहां मातपिताकी साख । पारस नाम सकल सुर भाख॥
राखि सुरासुर सेवा-जोग । चले देव सब साधि नियोग१२६

दोहा ।

इहिविध इंद्रादिक अमर, जन्मकल्यानक ठान ।
बहुबिध पुन्य उपायकै, पहुंचे निज निज थान ॥१२७॥

हरगीति ।

इंद्रादि जन्मसनान जिनकौ, करन कनकाचल चढ़े ।
गंधर्व देवन सुजस गायौ, अपछरा मंगल पढ़े ॥
इहविध सुरासुर निज नियोगै, सकल सेवाविधि ठई ।
ते पासप्रभु मुझ आस पुरवो, सरन सेवकने लई ॥१२८॥

इति श्रीमत्पार्श्वपुराणभाषाया जिनेन्द्रजन्मोत्सववर्णन
नाम षष्ठोऽधिकार ।

# सातवाँ अधिकार ।



दोहा ।

पारस प्रभु तजि औरकौं, जे नर पूजनजाहि ॥
कलपबिरछकौं छांड़िकैं, बैठें थूहर छाहिं ॥ १ ॥

चौपई ।

अब जिन बालचंद्रमा बढ़ै । कोमल हास-किरन मुख कढ़ै ॥
छिन छिन तात-मात-मन हरै । सुखसमुद्र दिन दिन विस्तरै
अम्रत इंद्र अंगूठे देय । वही पोष पयपान न लेय ॥
देवी धाय हरष मन धरैं । मज्जनमडनविधि सब करैं ॥ ३ ॥
केई मनिभूषन पहराय । करैं अलकृत प्रभुकी काय ॥
केई कामिनि करैं सिंगार । श्रीमुखचंद्र निहार निहार ॥४॥
केई रहसवती तिय आय । हस्त कमलसौं लेय उठाय ॥
मनिमय आंगनमांझ अनूप । विचरैं जिनपति बालसरूप ५
बहुविध देवकुमार मनोग । बालकरूप भये वयजोग ॥
घुटियां गमन करैं तिनसाथ । ज्यों नछत्रगनमैं निसि-नाथ॥
कबहीं सैनासन सोवंत । ऊपर दिढ़ जिन यौं जोवंत ॥
अजौं मुक्ति मो केतक परैं । मानौं यह सका मन धरैं ॥७॥
कबहीं पुहुमीपै जिनराय । कंपित चरन ठवैं इहि भाय ॥
सहै कि ना धरती मुझभार । संकैं उर उपमा यह धार॥८॥
कबही स्वामि उझकि उठि चलैं। विकसत मुख सब दुखकौं दलैं
बांधैं मुठी अटपटे पाय । कैसे वह छबि बरनी जाय ॥ ९ ॥

कबही रतन-भीतमैं रूप । झलकै ताहि गहैं जगभूप ॥
जिनसौं जिन न मिलैं सर्वथा। करत किधौं कहवत यह वृथा
कबही रतन-रेत कर लेत । करैं केलि सुरकुमरसमेत ॥
कबहि माय विन रुदन करेय। देखैं फेरि विहॅसि हॅस देय११
कबही छोड़ि सखीकी गोद । जननी-अंक जायँ मनमोद ॥
मातासौं मानैं अति प्रीति । बाल अवस्थाकी यह रीति१२
यौं जिन बालकलीला करै । त्रिभुवनजनमनमानिक हरै ॥
क्रमसौं बालभारती नाम । श्रीमुखकमल लसी अभिराम१३
अनुक्रम भई अंगबढ़वार । तब त्रिभुवनपति भये कुमार॥
निरुपम कांति कला विग्यान । लावन रूप अतुलगुनथान१४
मति-श्रुति-अवधि-ग्यानबल देव । जानैं सकल चराचर भेव॥
सोमसुभाव सहज उपसंत । निर्मल छायकदरसनवंत ॥१५॥
इहिविध आठबरसके भये । तब प्रभु आप अनुव्रत लये ॥
देवकुमार रहैं संग नित्त । ते छिन छिन रंजैं जिन-चित्त १६
कबहीं गज तुरंग तन धरैं । तिनपै चढ़ि प्रभु जनमन हरैं ॥
कबही हंस मोर बन जाहि । तिनसौं जगपति केलि कराहिं
कबहीं जलक्रीडाथल गमैं । कबहीं बनविहारभू रमैं ॥
कबही करैं किंनरी गान । सो प्रभु सुजस सुनैं निज कान१८
कबहीं निरत ठवैं सुर-नार । देखैं जिन लोचनसुखकार ॥
कबही काव्यकथारस ठान । करैं गोठ जिन बुधि बलवान१९
विना सिखाये विन अभ्यास । सब विद्या सब कलानिवास॥
यो सुखअनुभव करत महान । भये पास जिन जोबनवान२०

दोहा।

संपूरन जोवन समय, प्रभुतन सोहै एम ॥
सहजमनोहर चांदकी, सरदसमय छवि जेम ॥ २१ ॥

चौपई।

प्रभुके अंग पसेव न होय। सहज सदा मलवरजित सोय ॥
उज्जलवरन रुधिर जिमि खीर। सुसमचतुरसंठान सरीर २२
प्रथम सारसंहननसरूप। इंद्र-चंद्र-मनहरन अनूप ॥
विनाहेत तन सहज सुवास। प्रियाहितवचन मधुर मुख जास
अतुलदेह बल धरत महान। सहस अठोतर लच्छनवान ॥
तिनके नाम लिखौं कछु जोय। पढत सुनत सुखसंपति होय

हरिगीत।

श्रीवच्छ सख सरोज स्वस्तिक, सक्र चक्र सरोवरो।
चामर सिहासन छत्र तोरन, तुरगपति नारी नरो ॥
सायर दिवायर कलपवेली, कामधेनु धुजा करी ॥
वरवज्रवान कमान कमला, कलस कच्छप केहरी ॥२५॥
गंगा गऊपति गरुड गोपुर, वेणु वीणा वीजना।
जुगमीन महल मृदगमाला, रतन दीप दिपै वना ॥
नागेद्र-भुवन विमान अंकुस, विरछ सिद्धारथ सही।
भूपन पटवर हट्ट हाटक, चद्रचूडामनि कही ॥ २६ ॥
जम्बू तरोवर नगर सूवस (?) बाग जनमनभावना।
नौनिधि नछत्र सुमेरु सारद, साल खेत सुहावना ॥
ग्रह मंगलाष्टक प्रातिहारज, प्रमुख और विराजहीं ॥
परमितअठोतर सहस प्रभुके, अंग लच्छन छाजहीं ॥२७॥

अंतर अनंती अतुल महिमा, कथन दूर रहो कहीं।
वहिरंग गुनथुति करन जगमैं, सक्रसे समरथ नहीं ॥
अब और जनकी कौन गिनती, दीन पार न पावना।
पर पासप्रभुकी सुजसमाला, पहिरि दास कहावना ।२८।

दोहा।

सहस अठोतर लछन ये, सोभित जिनवरदेह।
किधौं कलपतरुराजके, कुसुम विराजत येह ॥ २९ ॥

चौपई।

सुभ परमानूमय जिन अंग। नीलवरन नौ हाथ उतंग।
छबि वरनत नहिं पावैं ओर। त्रिभुवनजनमनमानिकचोर॥
सतसवत्सर आव प्रमान। अतुल असाधारन गुनथान ॥
सत्रुमित्रऊपर समभाव। दयासरोवर सोमसुभाव ॥ ३१ ॥
सागरसौं प्रभु अति गंभीर। मेरुसिखरसौं अधिकै धीर ॥
कांति देखि लाजै मिरगाक। तेज विलोकि छिपै रवि रांक
कलपविरछसौ अधिक उदार। तिहुंजगआसापूरनहार ॥
यौं जिनगुनकौं उपमा कहीं। तीनकाल त्रिभुवनमैं नहीं ३३

दोहा।

यों सुख निवसत पास जिन, सेवत कमला पाय।
सोलह वरस प्रमान प्रभु, भये जगतसुखदाय ॥ ३४ ॥
सभासिंहासन एक दिन, बैठे सहज जिनेंद्र ॥
सुरनरमैं प्रभु यौं दिपैं, ज्यो उडगनमैं चन्द्र ॥ ३५ ॥
अस्वसेन भूपाल तव, वोले अवसर पाय।
नेहसलिलभीजे वचन, सुनो कुमर जगराय ॥ ३६ ॥

एक राजकन्या वरो, करो उचित व्यवहार।
बंसबेल आगे चलै, सुख पावै परिवार ॥ ३७ ॥
नाभिराजकी आस ज्यौं, भरी प्रथम अवतार।
तथा हमारी कामना, पूरन करो कुमार ॥ ३८ ॥
पितावचन सुनि प्रभु दियौ, प्रतिउत्तर तिहिं बार ॥
रिषभदेव सम मैं नहीं, देखौ हिये विचार ॥ ३९ ॥
मेरी सब सौ वर्ष थिति, सोलह भये वितीत।
तीस वर्ष संजम समय, फिर मत कहो पुनीत ॥ ४० ॥
अलपकालथिति अलप सुख, अलप पयोजनकाज।
कौन उपद्रव संग्रहै, समुझि देख नरराज ॥ ४१ ॥
सुन नरेंद्र लोचन भरे, रहे वदन बिलखाय।
पुत्रव्याहवर्जनवचन, किसे नही दुखदाय ॥ ४२ ॥

चौपई।

इहिविध मदराग जिनराय। निवसैं सबजीवनसुखदाय ॥
पूरवकथित कमठचर सीह। पाप करत मानी नहि चीह ४३
मुनिहत्यावस दुर्गति गयौ। पंचमनरकवास सो लयौ ॥
सत्रहजलधि तहां दुख सहे। वचन द्वार जो जाहि न कहे४४
थिति पूरन कर छोड़ी ठौर। सागर तीन भम्यौ फिर और
पसुगतिमाहि विपत बहु भरी। त्रसथावरकी काया धरी४५
इहिविध मयौ पाप अवसान। काहू जन्मक्रिया सुभ ठान॥
महीपालपुर सोहै जहाँ। महीपालनृप उपज्यौ तहां ॥४६॥

अंतर अनंती अतुल महिमा, कथन दूर रहो कहीं ।
वहिरंग गुनथुति करन जगमैं, सक्रसे समरथ नहीं ॥
अब और जनकी कौन गिनती, दीन पार न पावना ।
पर पासप्रभुकी सुजसमाला, पहिरि दास कहावना ।२८।

दोहा ।

सहस अठोतर लछन ये, सोभित जिनवरदेह ।
किधौं कल्पतरुराजके, कुसुम विराजत येह ॥ २९ ॥

चौपई ।

सुभ परमानूमय जिन अंग । नीलवरन नौ हाथ उतंग ।
छवि वरनत नहिं पावैं ओर । त्रिभुवनजनमनमानिकचोर॥
सतसवत्सर आव प्रमान । अतुल असाधारन गुनथान ॥
सत्रुमित्रऊपर समभाव । दयासरोवर सोमसुभाव ॥ ३१ ॥
सागरसौं प्रभु अति गंभीर । मेरुसिखरसौं अधिकै धीर ॥
कांति देखि लाजै मिरगांक । तेज विलोकि छिपै रवि रांक
कल्पविरछसौं अधिक उदार । तिहुंजगआसापूरनहार ॥
यौं जिनगुनकौं उपमा कहीं । तीनकाल त्रिभुवनमैं नहीं ३३

दोहा ।

यों सुख निवसत पास जिन, सेवत कमला पाय ।
सोलह वरस प्रमान प्रभु, भये जगतसुखदाय ॥ ३४ ॥
सभासिंहासन एक दिन, बैठे सहज जिनेंद्र ॥
सुरनरमैं प्रभु यौं दिपैं, ज्यों उड़गनमैं चन्द्र ॥ ३५ ॥
अस्वसेन भूपाल तव, वोले अवसर पाय ।
नेहसलिलभीजे वचन, सुनो कुमर जगराय ॥ ३६ ॥

एक राजकन्या वरो, करो उचित व्यवहार।
वसवेल आगे चलै, सुख पावै परिवार ॥ ३७॥
नाभिराजकी आस ज्यौं, भरी प्रथम अवतार।
तथा हमारी कामना, पूरन करो कुमार ॥ ३८॥
पितावचन सुनि प्रभु दियौ, प्रतिउत्तर तिहि बार॥
रिषभदेव सम मैं नहीं, देखौ हिये विचार॥ ३९॥
मेरी सब सौ वर्ष थिति, सोलह भये वितीत।
तीस वर्ष संजम समय, फिर मत कहो पुनीत॥ ४०॥
अल्पकालथिति अल्प सुख, अल्प प्रयोजनकाज।
कौन उपद्रव संग्रहै, समुझि देख नरराज॥ ४१॥
सुन नरेंद्र लोचन भरे, रहे वदन बिलखाय।
पुत्रव्याहवर्जनवचन, किसे नही दुखदाय॥ ४२॥

चौपई।

इहिविध मदराग जिनराय। निवसैं सवजीवनसुखदाय ॥
पूरवकथित कमठचर सीह। पाप करत मानी नहि चीह ४३
मुनिहत्यावस दुर्गति गयौ। पंचमनरकवास सो लयौ ॥
सत्रहजलधि तहां दुख सहे। वचन द्वार जो जाहि न कहे४४
थिति पूरन कर छोडी ठौर। सागर तीन भम्यो फिर और
पसुगतिमाहि विपत बहु भरी। त्रसथावरकी काया धरी४५
इहिविध भयौ पाप अवसान। काहू जन्मक्रिया सुभ ठान॥
महीपालपुर सोहै जहाँ। महीपालनृप उपज्यौ तहां॥४६॥

पारसप्रभुकी वामा माय। इनकौ पिता भयौ यह राय ॥
पटरानीके प्रानवियोग। उपज्यौ विरह बढ्यौ चित सोग
तपसी भेष धर्यो दुख मान। पंचागनि साधै बनथान ॥
सीस जटा मृगछाला संग। भसम पीस लाई सब अंग ॥४८॥
भ्रमत बनारसिके उद्यान। आयौ कष्ट करत बिनग्यान ॥
इहि अवसर श्रीपार्श्वकुमार। गये सहज बन करन विहार
राजपुत्र बहु सुरगन साथ। गज आरूढ़ दिपैं जिननाथ ॥
कर सुछंद बनकेलि अनूप। चले नगरकौं आनँदरूप ॥५०॥
देख्यौ मगमैं जननी-तात। तपै पंचपावक-तप गात ॥
सो समीप प्रभुकौं अविलोय। चिंतै चित रोपातुर होय ५१
मैं तपसी कुलवंत महत। जननी-पिता पूज सब भंत ॥
अहो कुमरके यह अभिमान। विनय प्रनाम करै नहिं आन
इतने ईंधन कारन जान। लकडी चीरन लग्यौ अयान ॥
हाथ कुल्हाड़ी लीनी जबै। हितमितवचन चये प्रभु तबै ५२
भो तपसी यह काठ न चीर। यामैं जुगल नाग हैं बीर ॥
सुनि कठोर बोल्यौ रिस आन। भो बालक तुम ऐसा ग्यान
हरिहर ब्रह्मा तुम ही भये। सकलचराचरग्याता ठये ॥
मनै करत उद्धत अविचार। चीर्यौ काठ न लाई बार ५५
ततखिन खड भये जुगजीव। जैनी बिन सब अदय अतीव
दयासरोवर जिन तब कहै। तपसी वृथा गरव तू वहै ॥५६॥
ग्यान विना नित काया कसै। करुना तेरे उर नहि वसै ॥
तब सठ रोपवचन फिर चयौ। जननी जनकर तपसी भयौ

करै न मदवस विनयविधान। और उलट खंडै मुझ आन॥
पंच अगनि साधूं तन-दाह। रहूं एकपद ऊरधबाँह॥५८॥
भूख प्यास बाधा सब सहूं। सूखे पत्र पारनैं गहूं॥
ग्यानहीन तप क्यों उच्चरै। क्यों कुमार मुझ निंदा करै॥५९॥
तब प्रभुवचन कहे हितकार। तुझ तपमैं हिंसाअघभार॥
छहों कायके जीव अनेक। नास होंहिं नित नाहिं विवेक६०
जहां जीवबध होय लगार। तहां पाप उपजै निरधार॥
पाप सही दुर्गति दुख देह। यातैं दयाहीन तप येह॥६१॥
ग्यान बिना सब कायकलेस। उत्तम फलदायक नहि लेस॥
जैसे तुस कंडन (?) कन छार। यों अजान तप अफल असार६२
अंधपुरुष वन-दौमैं दहै। दौर मरै मारग नहिं लहै॥
त्यों अजान उद्यम करि पचै। भवदावानलसौं नहि बचै॥६३॥
ऐसे ही किरिया बिन ग्यान। सो भी फलदायक नहि जान॥
जथा पंगु लोचनबल धरै। उद्यमबिन दावानल जरै॥ ६४॥
तातैं ग्यानसहित आचार। निहचै वांछितफलदातार॥
इहिबिध जिनमतके अनुसार। करि उत्तम तप यह हठ छार६५
मैं तुझ वचन कहे हितकार। तू अपने उर देखि विचार॥
भली लगै सोई करि मित्त। वृथा मलीन करै मति चित्त॥६६॥

दोहा।

नाग जुगल सुनि जिनवचन, क्रूरजीव अति निंद॥
देह त्यागि ततखिन भये, पद्मावति धरनिंद॥६७॥

नाग जुगलके भागकी, महिमा कही न जाय ॥
जिनदरसन प्रापति भई, मरन समय सुखदाय ॥ ६८ ॥

चौपई ।

घर आये श्री पार्सजिनंद । सुरनरनेत्रकमलिनीचंद ॥
समय पाय तपसी तजि देह । भयौ जोतिषी संवर तेह ॥६९॥
देखो जगमैं तपपरभाव । ग्यान बिना बांधी सुरआव ॥
जे नर करैं जैनतप सार । तिन्हैं कहा दुर्लभ संसार ॥ ७० ॥
स्वामी मगन सुखोदधिमाहिं । हर्ष विनोद करत दिन जाहिं ॥
प्रभुके इष्ट-वियोग न होय । सोगसँजोग न कबही कोय ॥७१॥
वायपित्तकफजनित विकार । सुपनै होय न सोच विचार ॥
जरा न व्यापै तेज न जाय । ना मुखकमल कभी कुम्हलाय ७२
होहि नहीं दुखकारन आन । पुन्यउदधिवेला भगवान ॥
यो सुखभोग करत दिन गये । तब जिन तीस वर्षके भये ॥७३॥
नृप जयसेन अजुध्याधनी । भक्ति प्रीत प्रभुसौं अति घनी ॥
तुरगादिक बहु वस्तु अनूप । पठई विनय वचन कहि भूप॥७४॥
राजदूत चलि आयौ तहां । सभा थान जिन बैठे जहां ॥
हेमासन पर सोहैं एम । हिमगिरिसिखर स्यामघन जेम॥७५॥
देखि दूत रोमांचित भयौ । बहुविध चरन कमलकौं नयौ ॥
मान्यौ सफलजन्म निज सार। त्रिभुवनपति परतच्छ निहार७६
धरी भेट जो राजा दई । विनय प्रनाम वीनती चई ॥
तब पूछैं तहां त्रिभुवनधनी। संपति नगर अजोध्यातनी ॥७७॥

कहै दूत कर जुग सिर धार। बरनैं तीर्थकर अवतार॥
मोख गये बरनैं तिहिंठाम। सुनि स्वामी चिंतैं उर ताम॥७८॥

बेली चाल।

सुनि दूत वचन वैरागे। निज मन प्रभु सोचन लागे॥
मैं इंद्रासन सुख कीनैं। लोकोत्तम भोग नवीनैं॥ ७९॥
तब तृपति भई तहां नाही। क्या होय मनुपपदमाही॥
जो सागरके जलसेती। न बुझी तिसना तिस एती॥८०॥
सो डाभ-अनीके पानी। पीवत अब कैसे जानी॥
ईंधनसौं आगि न धापै। नदियौं नाहि समुद समापै॥८१॥
यों भोगविषै अतिभारी। तृपते न कभी तनधारी॥
जो अधिक उदय ये आवैं। तौ अधिकी चाह बढ़ावै ८२
जो इनसौं तृपति विचारै। सो वैसानर घृत डारै॥
इन सेवत जो सुख पावै। सो आकौं आंब उम्हावै॥ ८३॥
ये भीम भुजंग सरीखे। भ्रम-भाव-उदय सुभ दीखे॥
चाखतहीके मुख मीठे। परिपाक समय कटु दीठे॥ ८४॥
ज्यों खाय धतूरा कोई। देखै सब कचन सोई॥
धिक ये इंद्री-सुख ऐसे। विषबेल लगे फल जैसे॥ ८५॥
इनहीं वस जीव अनादी। भव भाँवर भ्रमत सवादी॥
इन ही वस सीख न मानै। नानाविध पातक ठानै॥८६॥
थिर जंगम जीव सघारै। इनके वस झूठ उचारै॥
पर चोरीसों चित लावै। परतिय संग सील गमावै॥ ८७॥

परिग्रह-तिसना विस्तारै। आरंभ उपाधि विचारै ॥
इत्यादि अनर्थ अलेखै। करि घोर नरकदुख देखै ॥ ८८ ॥
ये ही सुखपर्वतकेरे। जग फोरन वज्र बडेरे ॥
ये ही सब दोपभंडारे। धन-धर्म-चुरावनहारे ॥ ८९ ॥
मोही जन मोहैं योहीं। ये आदरजोग न क्यों हीं ॥
इनसौं ममता तज दीजै। पर त्यागत ढील न कीजै ॥९०॥
सामान पुरुष जग जैसे। हम खोये ये दिन ऐसे ॥
संजम बिन काल गमायौ। कछु लेखेमैं नहिं लायौ ॥९१॥
ममतावस तप नहि लीनौं। यह कारज जोग न कीनौं ॥
अब खाली ढील न कीजे। चारित-चिंतामनि लीजै ॥९२॥

दोहा।

भोगविमुख जिनराज इमि, सुधि कीनी सिवथान।
भावैं बारह भावना, उदासीन हितदान ॥ ९३ ॥

चौपई।

द्रव्य सुभाव विना जगमाहि। पर ये रूप कछू थिर नाहिं॥
तनधन आदिक दीखत जेह। कालअगनि सब इंधन तेह ९४
भववन,भ्रमत निरंतर जीव। याहि न कोई सरन सदीव ॥
व्योहारै परमेठी-जाप। निहचै सरन आपकौं आप ॥ ९५॥
सूर कहावै जो सिर देय। खेत तजै सो अपजस लेय ॥
इस अनुसार जगतकी रीत। सब असार सब ही विपरीत९६
तीनकाल इस त्रिभुवनमाहिं। जीव-संगाती कोई नाहि ॥
एकाकी सुख दुख सब सहैं। पाप पुन्य करनीफल लहैं ९७

तीर्थंकर जब विरकत होय। हर्षवंत तब आवैं सोय॥
और कल्यानक करैं प्रनाम। सदा सुखी निवसैं निज धाम१०९
हाथ जोरि बोले गुनकूप। थुतिवायक अरु सिच्छारूप॥
धनि विवेक यह धन्य सयान। धनि यह औसर दयानिधान॥
जान्यौ प्रभु संसार असार। अथिर अपावन देह निहार॥
इंद्रिय सुख सुपने सम दीस। सो याही विध हैं जगईस॥१११॥
उदासीन असि तुम कर धरी। आज मोहसेना थरहरी॥
बढ़्यौ आज सिवरमनि सुहाग। आज जगे भविजन सिरभाग
जग प्रमादनिद्रावस होय। सोवत है सुधि नाहीं कोय॥
प्रभु धुनिकिरन पयासै जबै। होय सचेत जगै जन तबै॥११३॥
यह भव दुस्तर पारावार। दुखजलपूरित वार न पार॥
प्रभु उपदेस पोत चढ़ि धीर। अब सुखसौं जैहैं जन तीर ११४
सिवपुरि पौर भरमपट जहां। मोह मुहर दिढ कीनी तहां॥
तुम वानी कूची कर धार। अब भवि जीव लहैं पयसार११५
स्वयबुद्ध बोधन-समरत्थ। तुम पर प्रतिबुध वचन अकत्थ॥
ज्यों सूरज आगे जिनराज। दीप दिखावन है बेकाज॥११६॥
हम नियोग औसर यह भाय। तातैं करैं वीनती आय॥
धरिये देव महाव्रत भार। करिये कर्मसत्रुसंघार॥ ११७॥
हरिये भरम तिमिर सर्वथा। सूझै सुरगमुकतिपथ जथा॥
यों थुति करि बहुभाव दिढाय। बारबार चरनन सिर नाय
साधि नियोग गये निजथान। लोकांतिक सुर बड़े सयान॥
अब चौविध इन्द्रादिक देव। चढ़ि निज निज बाहन बहुभेव१९

हर्षित उर परिवारसमेत। आये तृतिय कल्यानक हेत॥
सुर वनिता नाचैं रस भरीं। गावैं मधुरगीत किन्नरीं॥१२०॥
बाजे विविध बजैं तिस बार। करैं अमरगन जय जय कार
सोवन-कलस भरे सुरराय। विमल छीरसागर-जल लाय १२१
हेमासन थापे जिनराय। उच्छवसाहित न्हौन-विधि ठाय॥
भूषन वसन सकल पहिराय। चंदनचर्चित कीनी काय १२२
इस औसर प्रभु सोहैं एम। मोखवधूवर दूलह जेम॥
कहि वैराग वचन जिन तबै। प्रतिबोधे परिजन जन सबै॥
अति हठसौं समझाई माय। लोचन भरे बदन विलखाय॥
विमला नाम पालकी साज। आनी इंद्र चढे जिनराज१२४
पहले भूमिगोचरी राय। सात पैंड़ लीनी सुखदाय॥
फिर विद्याधर राजा रले। पैंड़ सात ही ते ले चले॥१२५॥
पीछे इंद्रादिक सुरसंघ। कांधे धरी चले पुर लंघ॥
ना अति निकट न दीसै दूर। नभ मारग देखै जन भूर१२६

दोहा।

जिस साहबकी पालकी, इंद्र उठावनहार॥
तिस गुनमहिमा-कथन अब, पूरन होउ अपार॥१२७॥

चौपई।

यों सुर नर हरपित भये। अस्व नाम वनमै चलि गये॥
वडतरुतलैं सिला सुभ जहां। कीनौं सची सांथिया तहां॥
उतरे प्रभु अति उत्तम ठाम। सात भयौ कोलाहल ताम॥
सत्रुमित्र ऊपर समभाव। तिन-कंचन गिन एकसुभाव १२९

सोमभाव स्वामी उर धार। पटभूषन सब दीनैं डार ॥
उदासीन उत्तरमुख भये। हाथ जोर सिद्धन प्रति नये १३०
दुविध परिग्रह तजि परमेस। पंच मुष्टि लोचे सिरकेस ॥
सिवकामिनिकी दूती जोय। धरी दिगंबरमुद्रा सोय ॥१३१॥

दोहा।

सोहै भूषन वसन बिन, जातरूप जिनदेह ॥
इंद्र नीलमनिकौ किधौं, तेजपुंज सुभ येह ॥ १३२ ॥
पोह प्रथम एकादसी, प्रथम पहर सुभ वार ॥
पद्मासन श्रीपार्सजिन, लियौ महाव्रतभार ॥ १३३ ॥
और तीनसै छत्रपति, प्रभुसाहस अविलोय ॥
राज छारि संयम धर्यौ, दुखदावानल-तोय ॥ १३४ ॥
तब सुरेस जिनकेस सुचि, छीरसमुद पहुँचाय ॥
कर थुति साधनियोग सब, गयौ सुरग सुरराय ॥ १३५ ॥

चौपई।

अब स्वामी वनथान मनोग। तेला थापि दियौ जिन जोग ॥
अट्ठाईस मूलगुन भाख। उत्तरगुन चौरासी लाख ॥ १३६ ॥
सब प्रभु धरे परम समचेत। अचल अंग मुख मौनसमेत ॥
यो वन बसत उपन्यौ ज्ञान। संजमबल मनपर्जयग्यान १३७

सोरठा।

लघु वयमैं जगपाल, कियौ निर्वीरज कामदल ॥
धीरज धनुप संभाल, तिनके पदनीरज नमूं ॥ १३८ ॥

इति श्रीपार्श्वपुराणभाषाया भगवद्वैराग्यप्राप्तदीक्षाकल्याणकवर्णन नाम सप्तमोऽधिकार ।

# आठवाँ अधिकार।



सोरठा।

जाप्रभुकौ जसहंस, तीनलोक पिंजरैं बसै ॥
सो मम पाप विधंस, करौ पास परमेस नित ॥ १ ॥

चौपई।

अब जिन उठे जोग-अवसान। देहहेत उद्यम उर आन ॥
परमउदास अधोगत दीठ। सहजसांतमुद्रा मनईठ ॥ २ ॥

दया-नीर-निर्मल-परवाह। गुलर-खेटपुर पहुंचे नाह ॥
लाभ अलाभ बराबर धार। निर्धन धनकौ नाहि विचार॥३॥

ब्रह्मदत्त भूपति बड़भाग। प्रभुकौं देखि बढ्यौ उरराग ॥
उत्तमपात्र सकलगुनधाम। करि प्रनाम पड़िगाहे ताम ॥४॥

हेमासन थाप्यौ नरराय। प्रासुक जल परछाले पाय ॥
आठभांति पूजा विस्तरी। हाथ जोर अंजुलि सिर धरी॥५॥

मन-तन-वायक सुद्धसरूप। नौ दातागुनसजुत भूप ॥
सुद्ध अन्न दीनौ परवीन। प्रासुक मधुर दोषदुखहीन ॥ ६ ॥

उत्तमपात्र दानविधि करी। तीनभवन कीरति विस्तरी ॥
पचाचरज भये नृपधाम। फिर स्वामी आये वन-ठाम ॥ ७ ॥

करैं घोर तप साधैं जोग। दरसन करत मिटैं सब सोग ॥
अचल अंग मुख सोहै मौन। एकचित्त निजपद चितौन ॥८॥

ज्यों समुद्रजल विगतकलोल। अथवा सुरगिरिसिखर अडोल॥
तथा नीलमनि-प्रतिमा येह। यों अकंप राजै जिनदेह *॥ ९॥

चौपई।

वैर भाव छांड्यौ वन जीव। प्रीत परस्पर करैं अतीव॥
केहरि आदि सतावैं नाहिं। निर्विष भये भुजग बनमाहिं १०
सील सनाह सजौ सुचिरूप। उत्तरगुनआभरन अनूप।
तपमय धनुष धर्यौ निजपान। तीन रतन ये तीखन बान ११
समताभाव चढे जगसीस। ध्यान कृपान लियौ कर ईस॥
चारित-रंग-महीमैं धीर। कर्मसत्रुविजयी वरवीर॥ १२॥

दोहा।

स्वामीकी सबपर दया, सबहीके रछपाल॥
जगविजयी मोहादि रिपु, तिनके प्रभु छयकाल॥ १३॥

सोरठा।

देखो पौन प्रचंड, दूब न खडै दूबरी।
मौटे बिरछ बिहंड, बडे बड़ो ही बल करैं॥ १४॥

दोहा।

यों दुद्धर तप करत अति, धर्मध्यानपदलीन॥
चार मास छद्मस्त जिन, रहे रागमलहीन॥ १५॥

---

* उक्त च–
नेकिञ्चित्करकार्य्यमस्ति गमनप्राप्य न किञ्चिद्दृशो–
र्दृश्य यस्य न कर्णयो किमपि हि श्रोतव्यमप्यस्ति न।
तेनालम्बितपाणिरुज्झितगतिर्नासाग्रदृष्टी रह।
सम्प्राप्तोऽतिनिराकुलो विजयते ध्यानैकतानो जिन।

चौपई।

एक दिवस दीच्छावन जहां। जोगलीन प्रभु निवसैं तहां॥
काउसग्ग तन विगतविरोध। ठाडे जिनवर जोगनिरोध १६
संवर नाम जोतिषी देव। पूरवकथित कमठचर एव॥
अटक्यौ अंबर जात विमान। प्रभु पर रह्यौ छत्रवत आन१७
ततखिन अवधिग्यानबल तबै। पूरव बैर सँभालो सबै॥
कोप्यौ अधिक न थांभ्यौ जाय। राते लोयन प्रजुली काय१८
आरंभ्यौ उपसर्ग महान। कायर देखि भजैं भयमान॥
अंधकार छायौ चहुंओर। गरज गरज बरसै घन घोर॥१९॥
झरै नीर मुसलोपम धार। वक्र बीज झलकै भयकार॥
बूडे गिरि तरुवर बनजाल। झंझा वायु बही विकराल॥२०॥
जल थल भयौ महोदधि एम। प्रभु निवसैं कनकाचल जेम॥
दुष्ट विक्रियाबल अविवेक। और उपद्रव करे अनेक॥ २१ ॥

छप्पय।

किलकिलंत बेताल, काल कज्जल छवि सज्जहि।
भौं कराल विकराल, भाल मदगज जिमि गज्जहि॥
मुंडमाल गल धरहिं, लाल लोयननि डरहि जन।
मुख फुलिंग फुंकरहिं, करहिं निर्दय धुनि हन हन॥
इहि विध अनेक दुर्भेष धरि, कमठजीव उपसर्ग किय।
तिहुंलोकवंद जिनचंद्रप्रति, धूलि डाल निज सीस लिय २२

दोहा।

इत्यादिक उतपात सब, वृथा भये अति घोर।
जैसे मानिक दीपकौं, लगै न पौन झकोर॥ २३ ॥

प्रभु चित चल्यौ न तन हल्यौ, टल्यौ न धीरज ध्यान।
इन अपराधी क्रोधवस, करी वृथा निज हान ॥ २४ ॥
पावक पकरै हाथसौं, अवसि हाथ जलि जाय।
परके तन लागै नहीं, वाके पुन्यसहाय ॥ २५ ॥
प्रानी विषयकषायवस, कौन कौन विपरीत।
करत हरत कल्यान निज, जलौ जलौ यह रीत ॥ २६ ॥
प्रभु अचित्य-महिमा-धनी, त्रिभुवनपूजित-पाय।
तिनके यह क्यों संभवै, सुर उपसर्ग कराय ॥ २७ ॥
इहि विध जो कोई पुरुष, पूंछै संसय राखि।
ताके समुझावन निमित, लिखूं जिनागम साखि ॥ २८ ॥

चौपई।

अवसर्पनि उतसर्पनि काल। होंहि अनंतानंत विसाल ॥
भरत तथा ऐरावतमाहिं। रँहटघटीवत आवैं जाहि ॥ ३१ ॥
जब ये असंख्यात परमान, बीतै जुगम सेत भू थान ॥
तब हुंडावसर्पनी एक। परै करै विपरीत अनेक ॥ ३२ ॥
ताकी रीत सुनो मतिवंत। सुखमा-दुखम कालके अंत ॥
बरखादिककौ कारन पाय। विकलत्रय उपजैं बहु भाय॥३३॥
कलपविरछ विनसैं तिहि बार। बरतै कर्मभूमि-ब्योहार ॥
प्रथम जिनेस प्रथम चक्रेस। ताही समय होहि इहि देस॥३४॥
विजयभंग चक्रीकी होय। थोड़े जीव जाहि सिवलोय ॥
चक्रवर्ति विकलप विस्तरै। ब्रह्मवंसकी उतपति करै ॥ ३५॥

पुरुष सलाका चौथे काल। अट्ठावन उपजैं गुनमाल॥
नवम आदि सोलह परजंत। सात तीर्थमैं धर्म नसंत॥३६॥
ग्यारह रुद्र जनम जहँ धरैं। नौ कलिप्रिय नारद अवतरैं॥
सत्तम तेईसम गुनवर्ग। चरमजिनेश्वरको उपसर्ग॥ ३७॥
तीजे चौथेकालमझार। पञ्चममैं दीसै बढवार॥
विविध कुदेव कुलिंगी लोग। उत्तमधर्म नासके जोग॥३८॥
सबर विलाल भील चंडाल। नाहलादि कुलमैं विकराल॥
कल्की उपकल्की कलिमाहिं। बयालीस ह्वै मिथ्या नाहिं ३९
अनावृष्टि अतिवृष्टि विख्यात। भूमिवृद्धि वज्रागनिपात॥
ईतभीत इत्यादिक दोष। कालप्रभाव होंहिं दुखपोष॥४०॥

दोहा।

यो त्रिलोकप्रज्ञप्तिमैं, कथन कियौ बुधराज।
सो भविजन अवधारियौ, संसयमेटनकाज॥ ४१॥

गीता।

तीसरे कालहँ मुकति साधैं, प्रथमतीर्थंकर सही।
पुनि तीन तीरथ होंहिं चक्री, एरु हरि जिनवर वही॥
इस भाति चौथे जुग सलाका पुरुष ऊने अवतरैं।
हुंडावसर्पिनिमैं अठावन जीव वासठ पद धरैं॥ ४२॥

चौपई।

तब फनेस आसन कंपियौ। जिनउपकार सकल सुधि कियौ॥
ततखिन पद्मावति ले साथ। आयौ जहँ निवसैं जिननाथ४३

करि प्रनाम परदछना दई। हाथ जोरि पदमावति नई ॥
फनमंडप कीनौं प्रभुसीस। जलबाधा व्यापै नहिं ईस ॥४४॥
नागराज सुर देख्यौ जाम। भाज्यौ दुष्ट जोतिषी ताम ॥
हीनजोग सूधी यह बात। भागि जाय तबही कुसलात ॥४५॥
अब सब कोलाहल मिट गये। प्रभु सत्तमथानक थिर भये ॥
विकलपरहित चिदातमध्यान। करैं कर्मछयहेत महान॥४६॥
सात प्रकृति चौथे गुनठान। पहले नास करीं भगवान ॥
अब ह्यां धर्मध्यानबल धीर। तीन प्रकृति जीती बरवीर।४७।
प्रथम सुकल पदसौं परनये। खिपकसेनिमारग पर ठये ॥
प्रकृति छतीस नवैं छय करी। दसवैं लोभप्रकृति प्रभु हरी ४८

दोहा।

एकादसम उलंघिपद, चढे बारहैं थान ॥
कर्मप्रकृति सोलह तहां, नास करी अवसान ॥ ४९ ॥

चौपई।

इहिविध त्रेसठ प्रकृति निवार। घाते कर्म घातिया चार ॥
चैतअंधेरी चौदस जान। उपज्यौ प्रभुके पंचम ग्यान ।५०।
लोकालोक चराचर भाव। बहुविध परजयवंत सुभाव ॥
ते सब आन एक ही बार। झलके केवलमुकुरमंझार ॥५१॥
भये अनंतचतुष्टयवंत। प्रगटी महिमा अतुल अनंत ॥
दिव्य परम औदारिक देह। कोटि भानुदुति जीती जेह ५२
अलौकीक अद्भुत संपदा। मंडित भये जिनेसुर तदा ॥
वचनअगोचर महिमा सार। बरनन करत न पइये पार ॥५३॥

दोहा।

पांच हजार प्रमान धनु, उपजत केवलग्यान ॥
अतरिच्छ प्रभु तन भयौ, ज्यों ससि अंबरथान * ॥५४॥

चौपई।

प्रकटी केवल रविकिरन जाम। परिफूल्यौ त्रिभुवन कमल ताम
आकास अमल दीसै अनूप। दिसि-विदिसि भई सब विमलरूप
सुरलोक बजैं घंटागरिष्ट। तरु करन लगे तहां पुहपविष्ट ॥
इंद्रासन कांपे अतिगरीस। आनम्र भये मनिमुकुट सीस ५६
इत्यादिक बहुविध चिहन चार। प्रभु केवलसूचक भये सार॥
तब अवधि जोडि जान्यौ सुरेस। छय करे कर्म पारसजिनेस
सिंहासन तजि निज सीस नाय। प्रनमो परोख सुख उर न माय
इंद्रानी पूछै कहहु कंत। क्यों आसन तजि उतरे तुरंत ॥५८॥
किस कारन स्वामी नयौ सीस। याकौ प्रतिउत्तर देहु ईस ॥
तब बोले विकसित देवराज। प्रभु उपज्यौ केवलग्यान आज॥
ऐरावतगज सजि सपरिवार। प्रथमेंद्र चल्यौ आनँद अपार ॥
बाजे बहु पटह पयान-भेर। सब बरनन करत लगै अबेर॥६०॥
ईसानप्रमुख सब स्वर्गनाथ। निजवाहन चढि चढि चले साथ॥
हरिनाद सुन्यौ जोतिषी देव। चंद्रादि चले तब पंच भेव ॥६१॥
भावन-घर बाजे सख भूरि। दसविध सुर निकसे हरष पूरि ॥
वसु विंतर-घर गरजे निसान। यों परिजन सब कीनौं पयान ६२

* उक्तं च गाथा—
जादे केवलणाणे परमोदारं जिणाण सव्वाणं।
गच्छदि उवरि चावा पंचसहस्साणि वसुहाओ।

यों चली चतुरविध सुरसमाज। जिन-केवलपूजा करन काज॥
अंबर तजि आये अवनिमाहिं। जहँ समोसरन धुज फरहराहिं
जो सुरपतिकौ उपदेस पाय। धनपतिने कीनौं प्रथम आय॥
वर पंचवरन मनिमय अनूप। जगलछमीकौ कुलगृह सरूप६४

दोहा।

समोसरनकी संपदा, लोकोत्तर तिहुं भौन।
वचनद्वार बरनै तिसै, सो बुध समरथ कौन॥ ६५॥

सोरठा।

पै थल अवसर पाय, धर्मध्यानकारन निरखि॥
लिख्यौ लेस मन लाय, पढ़त सुनत आनँद बढ़ै॥ ६६॥

चौपई।

पहले गोलपीठिका ठई। इंद्रनीलमनिमय निर्मई॥
पांच कोस चौडी परवान। तीनलोक उपमा नहिं आन॥
जाके चहुंदिस गिरदाकार। बनी पैंड़िका बीसहजार॥
हाथ हाथपर ऊंची लसैं। नभपरजंत देखि दुख नसैं॥६७॥
तापर धूलीसाल उतंग। पंचरतनरजमय सरवंग॥
विविध वरनसौं बलयाकार। झलकै इन्द्रधनुष उनहार॥६८
कहीं स्याम कहि कंचनरूप। कहि विद्रुम कहिं हरितअनूप॥
समोसरन लछमीकौ एम। दिपै जड़ाऊ कुंडल जेम॥६९॥
चारों दिसि तोरन बन रहे। कनक थंभ ऊपर लहलहे॥
आगै मानभूमि है जहां। मानथंभ चारोंदिसि तहां॥७०॥
तिनकी प्रथम पीठिका बनी। सोलह पैंड़ी संजुत ठनी॥
चार चार दरवाजे ठान। तीन तीन तहां कोट महान॥७१

तिनमैं और त्रिमेखलपीठ। तिनपै मानथंभ थिर दीठ॥
अति उतग कंचनके ठये। छत्रधुजादिकसौं छवि छये॥७२॥
जिनै देखि मानी मद बढ़े। उतरे मान-महागिरि-चढ़े॥
मूलभाग प्रतिमा मनहरैं। इन्द्रादिक पूजा विसतरैं॥ ७३॥
एक एक दिसि चहुं दिसि ठई। सहज वापिका वारिज-छई॥
मद्रादिक सुभ जिनके नाम। चारौं दिसि सोलह सुखधाम॥
आगे खाई सोभित खरी। औंड़ी अधिक विमलजलभरी॥
रतन-तीर राजैं चहुंओर। हंसकलाप करै जहं सोर॥७५॥

दोहा।

बलयाकृति खाई बनी, निर्मल जल लहरेय।
किधौं विमल गगानदी, प्रभु परदछना देय॥ ७६॥

चौपई।

आगे पुहपबेल बन सार। महासुगंध मधुपसुखकार॥
सघन छांह सब रितुके फूल। फूले जहा सकल सुखमूल ७७
याकै कछु अंतर दुति धरै। कंचन कोट प्रथम मनहरै॥
बलयाकृति अति उन्नत जेह। मानौं मानुषोत्र गिरि येह॥
चहुंदिसि सोहैं चार दुवार। रूपमई तिखने मनहार॥
रतनकूट ऊपर जगमगै। लाल बरन अतिसुंदर लगै॥७९॥
किधौं अरुन-छवि हाथ उठाय। जगलछमी नाचै विहसाय
नौनिधि जहा रहैं अभिराम। पिंगलादि हैं जिनके नाम८०
प्रभुअजोग गिन दीनी छार। वे मचली सेवैं दरबार॥
मंगल दरव एकसौ आठ। धरे प्रतेक मनोहर ठाठ॥ ८१॥

गावैं जिनगुन देवकुमार। और विविध सोभा तहं सार ॥
विंतरदेव खड़े दरवान। विनयहीनकौं दैहिं न जान ॥८२॥
यह पहले गढ़की विधि कही। आगे और सुनौ अब सही ॥
गोपुर तजि चारौं दिसि गली। गमनहेत भीतरकौं चली८३
तहां निरतसाला दुहुं पास। सब दिसिमैं जानौ सुखवास॥
सुवरनथंभ फटिकमय भीत। तिखनी मनिमय सिखर पुनीत
सुरवानिता नाचैं तह एम। लावन-तोय-तरंगनि जेम ॥
मंदहास मुख सोहैं खरीं। जिनमंगल गावैं सुरभरीं ॥ ८५॥
बाजैं बीन बांसली ताल। महा मुरजधुनि होय रसाल ॥
आगे बीथी अंतर धरे। दोनों दिसा धूपघट भरे ॥ ८६ ॥

सोरठा।

स्याम वरन यह जानि, धूप धुआं नभकौं चल्यौ।
किधौं पुन्य-डर मानि, धूआं मिस पातग भज्यौ ॥८७॥

चौपई।

आगे चार बाग चहु ओर। प्रथम असोक नाम चितचोर॥
सप्तपरन चंपक सहकार। ये इनकी संग्या अविधार ॥८८॥
सब रितुके फल-फूलन-भरे। बिरछ बेलसौं सोहत खरे ॥
वापीमंडप महल मनोग। राजैं जहां जथाविध जोग ॥८९॥
चैत-विरछ चारौं बनमाहि। मध्यभागसुंदर छवि छाहिं ॥
जिनमुद्रामंडित मन हरैं। सुर नर नित पूजा विस्तरैं ॥९०॥
बाग ओट बेदी चहुंओर। चार द्वारमंडित छवि-जोर ॥
अब इस बन-बेदीतैं सही। गढ़परजंत गली जे रही ॥ ९१ ॥

तिनमैं धुजापांति फहराहिं। कंचनथंभ लगी लहराहिं॥
दसप्रकार आकार समेत। तिनके भेद सुनौ सुखहेत॥९२॥
माला वसन मोर अरविंद। हंस गरुड़ हरि वृषभ गयंद॥
चक्रसहित दस चिहन मनोग। धुजा दुकूलनि सोहैं जोग॥
ये दस एक जातकी जान। एक एकसौ आठ प्रमान॥
दससै असी सबै मिल भईं। एक दिसामैं सब बरनईं॥९४॥
चारौं दिसिकी जोड़ सरीस। चार हजार तीनसै बीस॥
यह परमित जिनसासनमाहि। अतिविचित्र सोभा अधिकाहि
हालैं धुजा पवन-वस येह। जिनपूजन भवि आये जेह॥
पथखेद तिनकौ मन आन। करत किधौं सतकार-विधान।
मानथंभ धुजथभ अनूप। चैतबिरछ बेदी गढ़रूप॥
इत्यादिक ऊचे इकसार। जिन-तनतैं बारह गुन धार॥९७॥
आगे रजतमयी निरमान। तुंग कोट अति धवल महान॥
किधौं सेत प्रभु-सुजस-प्रकास। फेरी देय फिरचौ चहुपास॥
पूरबवत दरवाजे चार। रतनमई अनुपमछवि-धार॥
नौनिधि मंगलदरब समाज। तोरनप्रमुख और सब साज॥
प्रथमकोटबरननसम जान। ठाडे भवन देव दरवान॥
यासौं लगी और अब गली। चारौं तरफ एक सी चली॥
कलपबिरछ-वन राजै तहां। दस विध कलपतरोवर जहां॥
भूषन वसन लगे जिन डार। सोभा कहत न लहिये पार॥
मध्यभाग जिनबिंबसमेत। सिद्धारथ तरुवर छबि देत॥
चहुंदिसि बेदी चहुं दिसि द्वार। रचना और अनेक प्रकार॥

इस बेदीके बाहर भाग। आगे फटिक कोट लौं लाग ॥
अति विचित्र महलनकी पांति। जिन सिर रतनकूट बहुभांति
चंद्रकांतिमनि-भासुर भीत। सुवरनमय तहां थंभ पुनीत ॥
सुरनरनाग रमैं जिनमाहिं। किन्नरगन बहु केलि कराहिं ॥
वीथीमध्यदेस सुभरूप। पद्मराग-मनिमय नव तूप ॥
धुजा छत्र घंटा छबि देहिं। जिनमुद्रासौं मन हर लेहि ॥
आगैं तृतिय कोट वन एम। फटिकमई निर्मल नभ जेम ॥
अति उतंग सो वलयाकार। लालबरन मनिनिर्मित द्वार ॥
और कथन पूरबवत जान। ठाड़े सुरगदेव दरवान ॥
महामनोहर लोचनहारि। अनुपमसोभा अचरजकारि १०७
अब सुनि मध्य भूमिकी कथा। फटिककोटभीतर विधि जथा
गढसौं प्रथम पीठ लग लगी। फटिकभीत सोलह जगमगी
तिनपै रतनथंभ छबि देहिं। प्रभाजालसौं तम हर लेहिं ॥
तिनहीपै श्रीमंडप छयौ। फटिकमई नभमैं निरमयौ १०९

सोरठा।

या श्रीमंडपमाहिं, निराबाध तिहुं जग बसैं।
भीर होय तहां नाहिं, त्रिभुवनपति अतिसय अतुल ११०

चौपई।

भीतन बीच गली जे रहीं। बारहसभा तहां जिन कहीं ॥
बैठे मुनि अपछर अज्जिया। जोतिष-जान-असुर-सुर-तिया ॥
भ.वन वितर जोतिषि देव। कल्पनिवासी नर-पसु एव ॥
तिनमैं प्रथम पीठिका ठई। अनुपम बेडूरज-मनिमई ११२

मोरकंठवत आभा जास। सोलह पैंड साल चहुं पास ॥
बारह सभा महा दिसि चार। तिनकौं यह पथ सोलह सार
मंगलदरव जहां सब धरे। जच्छदेव सेवक तहां खरे ॥
धर्मचक्र तिनके सिर दिपै। जिनकौ देखि दिवाकर छिपै॥
तापर दुतिय पीठिका बनी। चामीकरमय राजत घनी ॥
मेरुशृंगवत उन्नत एम। जगमगाय मंडल रवि जेम ॥११५॥
आठधुजा आठौं दिसि जहा। तिन सोभा बरनन बुधि कहां
तिनमैं आठ चिह्न चित्राम। चक्र गयद वृषभ अभिराम ॥
वारिज बसन केहरीरूप। गरुड़ माल आकार अनूप ॥
मंदपवनवस हालैं जेह। किधौं पापरज झारत येह ॥११७॥
तापर तृतिय पीठिका और। तीन मेखला-मंडित ठौर ॥
सर्वरतनमय झलकत खरी। किरन जास दस दिसि विस्तरी
गंधकुटी तहा बनी अनूप। पंचरतनमय जडित सरूप ॥
जाके चार द्वार चहुओर। झलकैं मानिक हीरा-होर ११९
तीनपीठ सिर सोहत खरी। किधौं त्रिजगछबि नीची करी
परम सुगंध न बरनी जाय। सुन्दर सिखर धुजा फहराय ॥
तहां हेम-सिंहासन सार। तेजसरूप तिमिर छयकार ॥
नानारतन प्रभामय लसै। जगलछमी प्रति किरनन हसैं ॥
वचनगम्य नहिं सोभा जहां। अंतरीच्छ प्रभु राजैं तहां ॥
त्रिभुवनपूजित पासजिनेस। ज्यों जगसिखर सिद्धपरमेस ॥

दोहा।

समवसरन रचना अतुल, ताको अति विस्तार।
संपति श्रीभगवानकी, कहत लहत को पार ॥ १२३ ॥

सोरठा।

जिन-बरनन-नभमाहिं, मुनि विहंग उद्यम करैं।
पै उड़ि पार न जाहिं, कौन कथा नर दीनकी ॥१२४॥

गीता।

राजत उतंग असोक तरुवर, पवनप्रेरित थरहरै।
प्रभु निकट पाय प्रमोद नाटक, करत मानौं मनहरै॥
तिस फूलगुच्छन भ्रमर गुंजत, यही तान सुहावनी।
सो जयौ पासजिनेंद्र, पातकहरन जगचूड़ामनी ॥ १२५ ॥
निज मरन देखि अनंग डरप्यौ, सरन ढूंढ़त जग फिरयौ।
कोऊ न राखै चोर प्रभुकौ, आय पुनि पायन गिरयौ॥
यो हार निज हथियार डारे, पुहप-बरसा मिस भनी।
सो जयौ पासजिनेंद्र, पातकहरन जगचूडामनी ॥ १२६ ॥
प्रभु अंग नील उतंग नगतैं, वानि सुचि सीता ढली।
सो भेदि भ्रम गजदंत पर्वत, ग्यानसागरमैं रली॥
नय सप्तभंगतरंगमंडित, पापतापविधंसनी॥
सो जयौ पासजिनेंद्र, पातकहरन जगचूडामनी ॥ १२७ ॥
चन्द्रार्चिचय छवि चारु चंचल, चमरवृंद सुहावने।
ढोलैं निरंतर जच्छनायक, कहत क्यों उपमा बनै॥
यह नीलगिरिके सिखर मानौं, मेघझर लागी घनी।
सो जयौ पासजिनेंद्र, पातकहरन जगचूड़ामनी ॥ १२८ ॥
हीराजवाहरखचित बहुविध, हेमआसन राजए।
तहं जगतजनमनहरन प्रभुतन, नीलबरन विराजए॥

यह जटित वारिज-मध्य मानौं, नीलमनिकलिका वनी।
सो जयौ पासजिनेंद्र, पातकहरन जगचूड़ामनी ॥ १२९
जगजीत मोह महान जोधा, जगतमैं पटहा दियौ।
सो सुकलध्यान कृपानवल, जिन विकट वैरी वस कियौ
ये वजत विजय निसान दुंदुभि, जीत सूचें प्रभुतनी।
सो जयौ पासजिनेंद्र, पातकहरन जगचूड़ामनी ॥ १३०
छदमस्त पदमैं प्रथम दरसन, ग्यान चारित आदरे।
अब तीन तेई छत्र छलसौं, करत छाया छवि-भरे॥
अति धवलरूप अनूप उन्नत, सोमबिंबप्रभा हनी।
सो जयौ पासजिनेंद्र, पातकहरन जगचूड़ामनी ॥ १३१
दुति देखि जाकी चांद सरमै, तेजसौं रवि लाजए।
अब प्रभामंडलजोग जगमैं, कौन उपमा छाजए॥
इत्यादि अतुल विभूतिमंडित, सोहिए त्रिभुवनधनी।
सो जयौ पासजिनेंद्र, पातकहरन जगचूड़ामनी ॥ १३२
यो असम महिमासिंधु साहब, सक्र पार न पावही।
तजि हासमय तुम दास 'भूधर,' भगतिवस जस गावही
अब होउ भव भव स्वामि मेरे, मैं सदा सेवक रहौं।
कर जोर यह वरदान मागौं, मोखपद जावत लहौं॥१३३

चौपई।

इह विध समोसरनमंडान। कियौ कुबेर जथाविध थान
आये सुर बरसावत फूल। जयजयकार करत सुखमूल॥१३४

अति प्रसन्नता सब विध भई। हरसत तीन प्रदछिना दई॥
धूलसालिमैं कियौ प्रवेस। चकित भयौ छबि देखि सुरेस१३५
मुदित महर्धिक देवन साथ। जिनसनमुख आयौ सुरनाथ॥
हंस्तकमल जोरे अमरेस। देखे हग भरि पासजिनेस॥१३६॥
मानि उतंग आसन पर ईस। मानौं मेघ रतनगिरि-सीस॥
फैल रही तनकिरनकलाप। कोटभानुसौं अधिक प्रताप १३७
विकसत चित रोमांचित काय। प्रनम्यौ चरन सीस भुवि लाय
मनिझारी भरि तीरथतोय। पूजे मघवा जिनपद दोय॥१३८॥
सुरग-सुगंधनि भक्ति बढाय। अरचे इंद्र जिनेसुरपाय॥
मुक्ताफलमय अच्छत लिये। पुंज परमगुरु आगे दिये॥१३९॥
पारिजात मंदार मनोग। पुहप चढ़ाये जिनवर जोग॥
सुधापिंड चरु लेय पवित्त। पूजा करी सक्र धरि चित्त॥१४०॥
रतनप्रदीप रवाने खरे। श्रीपति पॉय सचीपति धरे॥
देवलोककी अगर अनूप। पासचरन खेई सुरभूप॥ १४१॥
कलपतरोवरके फल रजे। जगपतिपॉय पुरदर जजे॥
सरब दरब धरि करि परनाम। दीन्यौ इंद्र अरघ अभिराम१४२

दोहा।

करि जिनपूजा आठ विध, भावभगति बहुभाय।
अब सुरेस परमेसथुति, करत सीस निज नाय॥ १४३॥

चौपई।

प्रभु इस जग समरथ नाहिं कोय। जापै जसबरनन तुम होय॥
चारग्यानधारी मुनि थके। हमसे मंद कहा कर सके॥१४४॥

यह उर जानत निहचै कीन। जिनमहिमावरनन हम हीन॥
पै तुमभगति करै वाचाल। तिसवस होय गहूँ गुनमाल॥१४५॥
जय तीर्थंकर त्रिभुवनधनी। जगचंद्रोपम चूडामनी॥
जय जय परमधरमदातार। करमकुलाचलचूरनहार १४६
जय सिवकामिनिकंत महंत। अतुल अनंत चतुष्टयवंत॥
जय जगआसभरन बडभाग।सिवलछमीके सुभग सुहाग१४७
जय जय धर्मधुजाधर धीर। सुरगमुकतिदाता वर वीर॥
जय रतनत्रय रतनकरंड। जय जिन तारनतरन तरंड॥१४८॥
जय जय समोसरन-सिंगार। जय संसयवनदहन तुसार॥
जय जय निर्विकार निर्दोष। जय अनंतगुनमानिककोष १४९
जय जय ब्रह्मचरजदल साज। कामसुभटविजयी भटराज॥
जय जय मोह-महानग-करी। जय जयमदकुंजरकेहरी॥१५०॥
क्रोधमहानलमेघ प्रचंड। मानमहीधरदामिनिदंड॥
मायाबेलधनंजयदाह। लोभसलिलसोषक दिननाह॥१५१॥
तुमगुनसागर अगम अपार। ग्यानजिहाज न पहुंचै पार॥
तट ही तट पर डोलत सोय। स्वारथ सिद्ध तहांही होय१५२
प्रभु तुम कीर्तिबेल बहु बढी। जतनबिना जगमंडप चढी॥
और अदेव सुजस नित चहै। ये अपने घरही जस लहैं १५३
जगतजीव घूमैं बिनग्यान। कीनैं मोहमहाविषपान॥
तुमसेवा विषनासन जरी। यह मुनिजन मिलि निहचै करी
जन्मलता मिथ्यामतमूल। जामनमरन लगैं जिहि फूल॥
सो कबही बिन भगतिकुठार। कटै नहीं दुखफलदातार१५५

कलपतरोवर चित्रावेल । काम पोरसा नौनिधि मेल ॥
चिंतामनि पारस पाषान । पुन्यपदारथ और महान ॥१५६॥
ये सब एकजनमसंजोग । किंचित सुखदातारनियोग ॥
त्रिभुवनाथ तुमारी सेव । जनमजनम सुखदायक देव १५७
तुम जगबांधव तुम जगतात । असरनसरन-विरद-विख्यात ॥
तुम जगजीवनके रछपाल । तुम दाता तुम परमदयाल १५८
तुम पुनीत तुम पुरुप पुरान । तुम समदरसी तुम सबजान ॥
तुम जिन जग्यपुरुप परमेस । तुम ब्रह्मा तुम विष्णु महेस१५९
तुमही जगभरता जगजान । स्वामि स्वयंभू तुम अमलान ॥
तुम बिन तीनकाल तिहुंलोय । नाहिं नाहि सरन जीवकौं कोय
तिस कारन करुनानिधि नाथ । प्रभु सनमुख जोरे हम हाथ
जबलौं निकट होय निरवान । जगनिवास छूटै दुखदान१६१
तब लौं तुम चरनांबुज-वास । हम उर होहु यही अरदास
और न कछु वांछा भगवान । यह दयाल दीजै वरदान १६२

दोहा ।

इहिविध इंद्रादिक अमर, करि बहुभगति विधान ॥
निज कोठे बैठे सकल, प्रभुसम्मुख सुखमान ॥ १६३ ॥
जीति कर्मरिपु जे भये, केवललब्धिनिवास ।
ते श्रीपारसप्रभु सदा, करो विघन घन नास ॥ १६४ ॥

इति श्रीपार्श्वपुराणभाषाया भगवत्ज्ञानकल्याणकवर्णन नाम अष्टमोऽधिकार ।

# नौवाँ अधिकार।



सोरठा

पारसप्रभुको नाउँ, सार सुधारस जगतमैं।
मैं याकी बलि जाउँ, अजर-अमर-पदमूल यह ॥ १ ॥

दोहा।

बारह सभा सुथानमधि, यों प्रभु आनदहेत।
जथा कमलिनीखंडकौं, ससिमंडल सुख देत ॥ २ ॥
विकसितमुख सुरनर सकल, जिनसन्मुख करजोर।
निवसैं प्यासे अमृतधुनि, ज्यौं चातक घनओर ॥ ३ ॥

चौपई।

तब-गनराज स्वयंभू नाम। चार ग्यानधारी गुनधाम ॥
करि प्रनाम पारसप्रभुओर। विनती करी करांजुलि जोर॥४॥
भो स्वामी त्रिभुवनघर येह। मिथ्यातिमिर छयो अति जेह॥
भूले जीव भमैं तामाहि। हितअनहित कछु सूझै नाहि॥५॥
श्रीजिनवानी दीपक-लोय। ता बिन तहाँ उदोत न होय ॥
तातैं करुनानिधि स्वयमेव। करि उपदेस अनुग्रह देव ॥६॥
जाननजोग कहा है ईस। गहनजोग सो कह जगदीस ॥
त्यागनजोग कहो भगवान। तुम सबदरसी पुरुष प्रमान॥७
कैसे जीव नरकमै परै। क्यो पसुजोनि पाय दुख भरै ॥
काहेसौं उपजै सुरलोय। कौन कर्मतैं मानुष होय ॥ ८ ॥

कौन पापफल जनमैं अंध। बहरा कौन क्रियासम्बन्ध ॥
किस अघ उदय होय नर पंग। गूंगा किस पातक-परसंग ९
कौन पुन्यतैं दरव अतीव। क्यों यह होय दरिद्री जीव ॥
पुरुष-वेद किस कर्म उदोत। नारि नपुंसक किस बिध होत
किस आचरन बड़ी थिति धरै। क्यो करि अलप आयु धरि मरै
भोगहीन अरु भोगसमेत। सुखी दुखी दीसै किस हेत ११
किस कारन मूरख मतिहीन। क्यों उपजै पंडित परवीन ॥
किस करनीतैं होय सरोग। किस अधर्मतैं पुत्रवियोग ॥१२
विकल सरीर पाय दुख सहै। नीच ऊंचकुल कैसें लहै ॥
किनभावनि भवथिति विस्तरै। भवथितिभेद कहाकरि करै
क्योंकर होय सुरगमैं इंद्र। कैसें पद पावै अहमिंद्र ॥
चक्रीपद किस पुन्यउदोत। किमि बांधै तीर्थंकरगोत॥१४॥
इत्यादिक यह प्रस्न समाज। इनको उत्तर कह जिनराज ॥
तुम सब संसयहरन जिनेस। जैसे भवतमदलन दिनेस॥१५॥

दोहा।

तब श्रीमुखवानी विमल, बिनअच्छर गंभीर।
महामेघकी गरज सम, खिरी हरन जगपीर ॥ १६ ॥
तालु होठ सपरस विना, मुखविकार बिन सोय।
सब भाषामय मधुरतर, श्रीजिनकी धुनि होय ॥ १७ ॥
जथा मेघजल परिनमैं, निंबादिकरसरूप।
तथा सर्वभाषामई, श्रीजिनवचन अनूप ॥ १८ ॥

चौपई।

छहौं दरव पचासतिकाय। सात तत्त नौ पद समुदाय॥
जाननजोग जगतमैं येह। जिनसौं जाहिं सकल संदेह॥१९॥
सब विध उत्तम मोखनिवास। आवागमन मिटै जिहि वास॥
तातैं जे सिवकारन भाव। तेई गहनजोग मन लाव॥२०॥
यह जगवास महादुखरूप। तातैं भ्रमत दुखी चिद्रूप॥
जिनभावन उपजै संसार। ते सब त्यागजोग निरधार॥२१
नरकादिक जग-दुख जावंत। पापकर्मवसतैं बहुभत॥
सुरगादिक सुखसंपति जेह। पुन्य तरोवरकौ फल तेह॥२२॥

दोहा।

इहि विध प्रस्नसमाजकौ, यह उत्तर सामान।
अब विसेस इनकौ लिखौं, जथासकति कछु जान॥ २३॥
जीव अजीव विसेस बिन, मूल दरव ये दोय।
इनहीकौ फैलाव सब, तीनकाल तिहुं लोय॥ २४॥
चेतन जीव अजीव जड़, यह सामान्यसरूप।
अनेकांत जिनमतविषै, कह्यौ जथारथरूप॥ २५॥
दरव अनेक नयातमक, एक एक नय साधि।
भयौ विविध मतभेद यौं, जगमें बढ़ी उपाधि॥ २६॥
जन्मअंध गजरूप ज्यों, नहिं जानै सरवंग।
त्यों जगमें एकांत मत, गहै एक ही अंग॥ २७॥
ता विरोधके हरनकौं, स्यादवाद जिनवैन।
सब संसयमेटन विमल, सत्यारथ सुखदैन॥ २८॥

सात भंगसौं साधिये, दरवजात जामाहिं।
सधै वस्तु निरविघन तब, सब दूपन मिट जाहिं ॥ २९ ॥

घनाक्षरी।

अपने चतुष्टैकी अपेच्छा दर्व 'अस्ति'रूप,
परकी अपेच्छा वही 'नासति' बखानियै ॥
एकही समै सो 'अस्ति नासति' सुभाव धरै,
ज्यों है त्यों न कहा जाय 'अवक्तव्य' मानियै ॥
अस्ति कहै नासति अभाव 'अस्ति अवक्तव्य,'
त्योंही नास्ति कहै 'नास्ति अवक्तव्य' जानिये ॥
एकै बार अस्ति नास्ति कह्यौ जाय कैसैं तातैं,
'अस्तिनास्तिअवक्तव्य' ऐसै परवानियै ॥ ३० ॥

दोहा।

इहि बिध ये एकांतसौं, सात भंग भ्रमखेत।
स्यादवाद पौरुप धरै, सब भ्रमनासन हेत ॥ ३१ ॥
स्यादसब्दकौ अर्थ जिन, कह्यौ कंथचित जान।
नागरूप नयविपहरन, यह जग मंत्र महान ॥ ३२ ॥
ज्यों रससिद्ध कुधातु जग, कंचन होय अनूप।
स्यादवाद-संजोगतैं, सब नय सत्यसरूप ॥ ३३ ॥

चौपई।

दरवदिष्टि जिय नित्तसरूप। परजयन्याय अथिर चिद्रूप ॥
नित्यानित्य कथञ्चित होय। कह्यौ न जाय कथंचित सोय ३४
नित्य अवाचि कथंचित वही। अथिर अवाचि कथंचित सही॥
नित्यानित्यअवाचक जान। कहत कथंचित सब परवान ३५

इहिविध स्यादवाद नयछाहि। साध्यौ जीव जैनमतमाहिं ॥
और भांति विकलप जे करैं। तिनके मत दूपन विसतरैं॥३६॥
जीव नाम उपयोगी जान। करता भुगता देहप्रमान ॥
जगतरूप सिवरूप अरूप। ऊरधगमन सुभावसरूप ॥ ३७॥

सोरठा।

ये सब नौ अधिकार, जीवसिद्धिकारन कहे।
इनकौ कछु विस्तार, लिखौं जिनागम देखिकै ॥ ३८ ॥

चौपई।

चार भेद व्यौहारी प्रान। निहचै एक चेतना जान ॥
जो इनसौं नित जीवित रहै। सोई जीव जैनमत कहै॥३९॥

सोरठा।

प्रथम आव अवधार, इंद्री सांस उसांस बल।
मूल प्रान ये चार, इनके उत्तरभेद दस ॥ ४० ॥

दोहा।

पांच प्रान इंद्रीजनित, तीनभेद बलप्रान।
एक सांस उस्वास गनि, आवसहित दस जान ॥ ४१ ॥

चौपई।

सैनी जीव जगतमैं जेह। दसौं प्रानसौं जीवैं तेह ॥
मनसौं रहित असैनी जात। ते नौप्रान धरैं दिनरात ॥४२॥
कान बिना चौइंद्री जिते। आठ प्रानके धारक तिते ॥
तेइद्रीके ऑख न भनी। तातैं सात प्रानके धनी ॥ ४३॥
नासा बिन बेइंद्री जीव। तिन सबके षट प्रान सदीव ॥
जीभ-वचनवर्जित तन तास। एकेंद्री चउ प्राननिवास ॥४४॥

दोहा ।

इहिविध जीव अजीव सब, तीनकाल जगथान ॥
सत्तासुख अवबोध चित, मुकतजीवके प्रान ॥ ४५ ॥

चौपई ।

दोप्रकार उपयोग बखान । दरसन चार आठ विध ग्यान ॥
चच्छु अचच्छु अवधि अवधार । केवल ये सब दरसन चार
अब सुन वसुविधग्यान-विधान । मति-स्रुतअवधिग्यानअज्ञान
मनपर्जय केवल निरदोख । इनके भेद प्रतच्छ परोख ॥ ४७ ॥
मतिश्रुतिग्यान आदिके दोय । ये परोख जानैं सब कोय ॥
अवधि और मनपरजयग्यान । एकदेसपरतच्छ प्रमान॥४८॥
केवलग्यान सकल परतच्छ । लोकालोक-विलोकन दच्छ ॥
जहां अनंत दरबपरजाय । एक बार सब झलकै आय ॥४९॥
दरसन चार आठ विध ग्यान । ये व्यवहार चिहन जी जान ॥
निहचैरूप चिदातम येह । सुद्ध ग्यान दरसन गुनगेह ॥५०॥
कलिपत असदभूत व्यवहार । तिस नय घटपटादि कर्तार ॥
अनुपचरित अजथारथरूप । कर्मपिंडकरता चिद्रूप ॥५१॥
जब असुद्धनिहचैबल धरै । तब यह रागदोपकौ हरै ॥
यही सुद्ध निहचै कर जीव । सुद्ध भावकरतार सदीव ॥५२॥

सोरठा ।

मानी सुख दुख आप, भुगतै पुद्गलकर्मफल ।
यह व्यवहारी छाप, निहचै निजसुखभोगता ॥ ५३ ॥

दोहा।

देहमात्र व्यवहार कर, कह्यौ ब्रह्म भगवान।
दरवित नयकी दिष्टिसौं, लोकप्रदेससमान ॥ ५४ ॥

अडिल्ल

लघुगुरु देहप्रमान, जीव यह जानिये।
सो विथार-संकोच-सकतिसौं मानिये ॥
ज्यों भाजनपरवान, दीपद्युति विस्तरै।
समुद्घात विन राम, यही उपमा धरै ॥ ५५ ॥

चौपई।

तैजस कारमानजुत भेस। बाहर निकसैं जीवप्रदेस ॥
छांड़ैं नहीं मूल तन ठाम। समुद्घातविधि याकौ नाम॥५६॥
सातभेद सब ताके कहे। गोमठसार देखि सरदहे ॥
प्रथम वेदना नाम बखान। दुतिय कषाय नाम उर आन ॥
तन-विकुर्वना तीजो येह। चौथो मारनांत सुनि लेह ॥
पंचम तैजस सग्या जान। छट्ठम आहारक अभिधान ॥५८॥
केवल समुद्घात सातमा। ऐसी सकति धरै आतमा ॥५९॥
दुसह वेदनाके वस जहाँ। जीवप्रदेस कढ़त हैं तहाँ ॥
किसी जीवकै हो परवान। पहला समुदघात यह जान॥६०॥
जब काहू रिपु करन विधस। बाहर जाहि जीवके अंस ॥
अतिकपायसौं हो है तेह। दूजो समुदघात है येह ॥ ६१ ॥
नाना जात विक्रियाहेत। निकसैं ब्रह्मप्रदेस सचेत ॥
देवनारकीके यह होय। तीजो समुदघात है सोय ॥ ६२ ॥

किसी जीवकै मरते समै। हंस अंस तन बाहर गमै॥
बांधी गतिके परसन काज। चौथो भेद कह्यौ जिनराज६३
जो मुनिकै कछु कारन पाय। उपजै क्रोध न थांभ्यौ जाय॥
तैजस तनकौ औसर यही। वामकंधसौं प्रगटै सही॥६४॥
ज्वालामई काहलाकार। अरु सिंदूरपुंज उनहार॥
बारह जोजन दीरघ सोय। नौ जोजन विस्तीरन होय॥६५
दंडकपुरवत प्रलय करेय। साधुसमेत भस्म कर देय॥
असुभकषाय यही विख्यात। अब सुनि सुभ तैजसकी बात॥
दुर्भिच्छादिक दुख अविलोय। दयाभाव मुनिवरकै होय॥
सुभआकृतिसौं निकसै ताम। दच्छिन कांधेसौं अभिराम॥
पूरवकथित देह-विस्तार। रोगसोग सब दोष निवार॥
फिर निज थान करै पैसार। पंचम समुद्घात यह धार६८
करत साधु पदअर्थ-विचार। मन संसय उपजै तिहिं बार॥
तहां तपोधन चिंता करै। कैसे यह विकलप निरवरै॥६९॥
भरतखेत आदिक भूमाहिं। अब ह्यां निकट केवली नाहिं॥
तातैं करिये कौन उपाय। बिनभगवान भरम नहिं जाय७०
तब मुनि-मस्तकसौं गुनगेह। प्रगट होय आहारक देह॥
एक हाथ तिस परमित कही। श्रीजिनसासनसौं सरदही।७१
फटिक वरन मनहरन अनूप। तहां जाय जहं केवलभूप॥
दरसनकरि संदेह मिटाय। फेरि आनि निजथान समाय७२
अष्टम समुद्घात यह मान। मुनिकै होहि छठैं गुनथान॥
जब सजोगि जिनकै परदेस। बाहर निकसैं अलख अभेस॥

दंड-कपाटादिक-विधि ठान। क्रमसौं होहिं लोकपरवान ॥
सतम समुद्घात यह भाय। सरधा करो भविक मन लाय७४
मरनांतक आहारक जेह। एक दिसागत जानौ येह ॥
बाकी पांच रहे जे आन। ते सब दसौं दिसागत जान॥७५
दुविध रास संसारी जीव। थावर जंगमरूप सदीव॥
तहां पांच विध थावरकाय। भू जल तेज वनस्पति वाय७६
चार जातके जंगम अंत। चलत फिरत दीखै बहुभंत ॥
संख सीप कौडी कृमि जोक। इत्यादिक वेइंद्री-थोक ॥७७
चैंटी दीम कुंथ पुनिआदि। ये तेइंद्री जीव अनादि ॥
माखी माछर भृंगीदेह। भ्रमरप्रमुख चौइंद्री येह ॥ ७८ ॥
देव नारकी नर विख्यात। केतक पसू पचेंद्री जात ॥
ये सब त्रस थावरके भेव। इनकौ विषयछेत्र सुन लेव ।७९।

छप्पय।

फरस चारसै पाच, जीभ चौसठ सौ नासा।
दृग जोजन उनतीस, सतक चौवन क्रम भासा॥
दुगुन असैनी अंत, श्रवन वसु सहस धनुष सुनि।
सैनी सपरस विषै, कह्यौ नौ जोजन श्रीमुनि॥
नौ रसन घ्राण नो चच्छुप्रति, सैतालीस हजार गिन।
दोसै त्रेसठि बारह स्रवनविषै-छेत्रपरवान भन॥ ८०॥

चौपई।

एकेंद्री सूच्छम अरु थूल। तीनभेद विकलत्रय मूल ॥
दोय प्रकार पचेंद्री कहे। मनसौं रहित सहित सरदहे ॥८१॥

दोहा।

सातों ही परयाप्ततैं, अपरयाप्ततैं जान।
चौदह जीवसमास यह, मूलभेद उर आन ॥ ८२ ॥

चौपई।

ऐसे ही चौदह गुनथान। चौदह मारगना उर आन ॥
जब लग है इन रूपी राम। तबलौं संसारी यह नाम ॥ ८३ ॥

अडिल्ल।

यह अनादि संसार, जीवकी भूल है।
इस कारजमैं और, हेतु नहिं मूल है ॥
तौ असुद्ध नयन्याय, जीव जगरूप है।
दिव्यदृष्टिसौं देख, सबै सिवभूप है ॥ ८४ ॥

दोहा।

भये कर्म-संजोगतैं, संसारी सब जीव।
साधनबल जीतैं करम, तब यह सिद्धसदीव ॥ ८५ ॥

अडिल्ल।

अष्ट गुणातमरूप, कर्ममलमुक्त हैं।
थिति उतपत्ति विनास, धर्मसंजुक्त हैं ॥
चरम देहतैं कछुक, हीन परदेस हैं।
लोकअग्रपुर बसैं, परम परमेस है। ॥ ८६ ॥

दोहा।

अथिर अर्थपरयाय जो, हानिवृद्धमय रूप।
तिसमैं सिद्ध बखानिये, उतपति नाससरूप ॥ ८७ ॥

ग्येय त्रिविध परनति धरै, ग्यान तदाकृत भास।
यों भी सिवपदमैं सधै, थित उतपत्ति विनास ॥ ८८ ॥
अथवा सब परनति नसै, भई सिद्धपर्याय।
सुद्धजीव निहचल सदा, यो तीनौं ठहराय ॥ ८९ ॥

अडिल्ल।

बरन पांच रस पांच, गंध दो लीजिए।
आठ फरस गुनजोर, बीस सब कीजिए ॥
जीवविषैं इनमाहिं, एक नहिं पाइए।
यातैं मूरतिहीन, चिदातम गाइए ॥ ९० ॥
जगमैं जीव अनादि, बंध-संजोगतैं।
छूटयौ कबही नाहिं, कर्मफलभोगतैं ॥
असद्भूत व्यवहार, पच्छ जो ठानिए।
तो यह मूरतिवंत, कथंचित मानिए ॥ ९१ ॥

दोहा।

प्रकृतिबंध थितिबंध पुनि, अरु अनुभाग प्रदेस।
चारभेद यह बंधके, कहे पास परमेस ॥ ९२ ॥
बंधविवर्जित आतमा, ऊरधगमन करेय।
एकसमयकरि सरलगति, लोकअंत निवसेय ॥ ९३ ॥
ज्यों जलतूंबी लेपबिन, ऊपर आवै सोय।
त्यों ऊरधगति राम यह, कर्मबंध बिन होय ॥ ९४ ॥
जबलौं चऊविध बंधसौं, बंधे जीव जगमाहिं।
सरल वक्र तबलौं चलैं, विदिसामैं नहि जाहिं ॥ ९५ ॥

अमृतचंद्रमुनिराजकृत, किमपि अर्थअवधार ॥
जीवतत्त्ववर्णन लिख्यौ, अब अजीव अधिकार ॥ ९६ ॥
पुद्गल धर्म अधर्म नभ, कालनाम अवधार।
ये अजीव जड़तत्त्वके, भेद पंच परकार ॥ ९७ ॥
तिनमैं पुद्गल दोय विध, बंधरूप अनुरूप।
यह सब हैं रूपी दरब, चारौं और अरूप ॥ ९८ ॥
अनुरूपी पुद्गल दरब, छेद भेद नहिं जास।
अगनि जलादिक जोगसौं, होय न कबही नास ॥९९॥
जा अविभागीमैं नहीं, आदि मध्य अवसान।
सब्द रहित पर सब्दकौं, कारणभूत बखान ॥ १०० ॥

सोरठा।

भू जल पावक वाय, हेतुरूप सबकौ यही।
बहुविध कारन पाय, वरनादिक पलटैं तुरत ॥ १०१ ॥
अविनासी जिसमाहिं, सदा पंच गुन पाइए।
इंद्रीगोचर नाहिं, अवधि ग्यानसौं जानिए ॥ १०२ ॥

दोहा।

वरन पांच रस पांचमैं, एक एक ही होय ॥
एक गंध दो गधमैं, आठ फरसमैं दोय ॥ १०३ ॥
ये परमानू पंचगुन, सात बंधमैं जान ॥
वरनादिक जे बीस हैं, ते गुन जात बखान ॥ १०४ ॥
आगे पुद्गल बंधके, सुनो भेद खट सोय ॥
सरधा करतैं समझतैं, संसय रहै न कोय ॥ १०५ ॥

चौपई।

प्रथम भेद अतिथूल वखान। दुतिय थूल संग्या उर आन॥
तृतिय थूल सूच्छम सरदहो। सूच्छम थूल चतुर्थम गहो।१०६॥
पंचम सूच्छम नाम गिनेह। छट्ठम अतिसूच्छम खट येह॥
अब इनकौ वरनन विरतंत। सुनौ एक मनसौं मतिवंत॥१०७॥
खंडखंड कीनैं जे बन्ध। फेर न मिलैं आपसौं सध॥
माटी ईंट काठपाखान। इत्यादिक अतिथूल बखान॥१०८॥
छिन्न भिन्न हो फिर मिल जाहिं। ऐसे पुद्गल जे जगमाहिं॥
घृत अरु तेल जलादिक जान। ये सब थूल कहे भगवान १०९
देखत लगैं दिट्टिसौं थूल। करमैं गहे जाहिं नहिं मूल॥
धूप चांदनी आदि समस्त। जान थूल ते सूच्छम वस्त॥११०॥
आंखनसौं दीसै नहिं जेह। चारौं इंद्रीगोचर तेह॥
विविध सपर्स सब्द रस गंध। सूच्छमथूल जान ते बंध॥१११॥
नाना भाति वर्गना भिंड। कारमान परमानू पिंड॥
काहू इंद्रीगोचर नाहिं। ते सूच्छम जिनसासनमाहिं॥११२॥
कर्मवर्गना सो ही कहा। जो अति ही सूच्छम सरदहा॥
द्वनुकआदि परमानूबंध। सो सूच्छमसूच्छम सुन बंध॥११३॥
खट प्रकार पुद्गल इहि भाय। मुख्य गौन सबमैं गुन थाय॥
इनहीसौं निर्मापत लोक। और न दीखै दूजौ थोक॥११४॥
सब्द बंध छाया तम जान। सूच्छम थूल भेद सठान॥
अरु उदोत आतप बहु भाय। यह दसविध पुद्गलपरजाय११५

जब जड़जीव चलै सतभाय । धर्मदरब तब करै सहाय ॥
जथा मीनकौ जलआधार । अपनी इच्छा करत विहार ११६
यों ही सहज करै थित सोय । तब अधर्म सहकारी होय ॥
ज्यों मगमैं पंथीकौं छाहिं । थितिकारन है बलसौं नाहिं ११७
जो सब द्रव्यनकौं अवकास । देय सदा सो द्रव्य अकास ॥
ताके भेद दोय जिन कहे । लोक अलोक नाम सरदहे ॥११८॥
जहं जीवादि पदारथवास । असंख्यातपरदेस निवास ॥
लोकाकास कहावै सोय । परैं अलोक अनंता होय ॥ ११९ ॥
लोकप्रदेस असंखे जहां । एक एक कालानू तहां ॥
रतनरासि-वत निवसैं सदा । द्रव्यसरूप सुथिर सर्वदा १२०
बरतावन लच्छन गुन जास । तीनकाल जाकौ नहिं नास ॥
समय घड़ी आदिक बहुभाय । ये व्यवहारकालपरजाय १२१
पहले कह्यौ जीवअधिकार । और अजीव पंचपरकार ॥
ये ही छहौं द्रव्यसमुदाय । कालबिना पंचासतिकाय ॥१२२॥

दोहा ।

बहु परदेसी जो दरव, कायवंत सो जान ।
तातैं पचअथिकाय हैं, काय काल बिन मान ॥ १२३ ॥

सवैया छंद ।

जीवरुधर्म अधर्म दरव ये, तीनौं कहे लोक-परवान ॥
असख्यात परदेसी राजैं, नभ अनंतपरदेसी जान ॥
संख असंख अनंतप्रदेसी, त्रिविधरूप पुद्गल पहिचान ॥
एकप्रदेस धरै कालानू, तातैं काल कायबिन मान ॥१२४॥

दोहा।

काल काय बिन तुम कह्यौ, एकप्रदेसी जोय।
पुद्गल परमानू तथा, सो सकाय क्यों होय ॥ १२५ ॥

सवैया।

अलख असंख्य दरव कालानू, भिन्नभिन्न जगमाहि बसाहिं।
आपसमाहिं मिलैं नहिं कबहीं, तातैं कायवंत सो नाहिं ॥
रूप सचिक्कनतैं परमानू, ततखिन बधरूप हो जाहिं।
यो पुद्गलकौ कायकलपना, कही जिनेसुरके मतमाहिं॥१२६॥
जितने मान एक अविभागी, परमानू रोकै आकास ॥
ताकौ नाव प्रदेस कहावै, देय सर्व दरवनकौं बास ॥
तहां एक कालानू निवसै, धर्मअधर्म प्रदेसनिवास ॥
रहैं अनंत प्रदेस जीवके, पुद्गलबध लहैं अवकास ॥ १२७ ॥

पोमावती।

धर्म अधर्म कालअरु चेतन, चारो दरव अरूपी गाये
तातैं एक अकास-देसमैं, प्रभु सबके परदेस समाये ॥
मूरतवंत अनंते पुद्गल, ते उस नभमै क्योंकर माये ॥
यह संसय समझाय कहो गुरु, दास होय हम पूछन आये १२८

सोरठा।

बहु प्रदीप परकास, जथा एक मंदिरविषै।
लहै सहज अवकास, बाधा कछु उपजै नहीं ॥ १२९ ॥

दोहा।

त्यो हीं नभ परदेसमैं, पुद्गल बंध अनेक ॥
निराबाध निवसैं सही, ज्यों अनंत त्यो एक ॥ १३० ॥

जो कर्मनकौ आगमन, आस्रव कहिये सोय।
ताके भेद सिद्धांतमैं, भावित दरवित दोय ॥ १३१ ॥

चौपई।

मिथ्या अविरत जोग कषाय। और प्रमाददसा दुखदाय ॥
ये सब चेतनके परिनाम। भावास्रव इनहीको नाम ॥१३२॥
तिनही भावनके अनुसार। ढिगवरती पुद्गल तिहि बार ॥
आवैं कर्म भावके जोग। सो दरवित आस्रव अमनोग १३३

सोरठा।

रागादिक परिनाम, जिनसौं चेतन बँधत है।
तिन भावनकौ नाम, भावबंध जिनवर कह्यौ ॥ १३४ ॥

दोहा।

जो चेतनपरदेसपै, बैठे कर्म पुरान ॥
नये कर्म तिनसौं बँधैं, दरवबंध सो जान ॥ १३५ ॥

पद्धरी।

आस्रव अविरोधनहेत भाव। सो जान भावसंवर सुभाव ॥
जो दर्वित आस्रव सुद्धरूप। सो होय दरव संवरसरूप१३६
व्रत पंच समिति पांचौं सुकर्म। वर तीन गुप्ति दस भेद धर्म
बारह बिध अनुप्रेच्छाविचार। बाईस परीषहविजय सार ॥
पुनि पांच जात चारित असेस,। ये सर्व भावसंवर विसेस ॥
इनसौं कर्मास्रव रुकै एम। परनालीके मुख डाट जेम १३८

दोहा।

सुभ उपयोगी जीवके, व्रत आदिक आचार।
पापास्रव अविरोधकौं, कारन हैं निर्धार ॥ १३९ ॥

लेश त्याग जहं होय, देशचारित वही।
सो गृहस्थकौ धर्म, गृही पालै सही ॥ १४९ ॥

दोहा।

तीर्थंकर निरग्रंथपद, धर साधो सिवपंथ।
सोई प्रभु उपदेसियो, मोखपंथ निरग्रंथ ॥ १५० ॥
दसविध बाहिज ग्रंथसैं, राखै तिल तुस मान।
तौ मुनिपद कहिये नहीं, मुनि बिन नाहिं निर्वान ॥१५१
जे जन परिग्रहवंतकौं, मानैं मुक्तिनिवास।
ते कबही न मुकत लहैं, भ्रमैं चतुरगतिवास ॥ १५२ ॥
क्रोधादिक जबही करै, बंधै कर्म तब आन।
परिग्रहके संयोगसौं, बंध निरंतर जान ॥ १५३ ॥
बंध अभावै मुक्ति है, यह जानै सब लोय।
बंध हेत बरतैं जहां, मुक्ति कहांतैं होय ॥ १५४ ॥
पच्छिम भान न ऊगवै, अगनि न सीतल होय।
जथाजात जिनलिंगबिन, मोख न पावै कोय ॥ १५५ ॥

छप्पय।

धन्य धन्य ते साधु, देह-भव-भोग विरच्चे।
धन्य धन्य ते साधु, आप अपने रस रच्चे ॥
धन्य धन्य ते साधु, पीठ जगकी दिसि कीनी।
धन्य धन्य ते साधु, दिष्टि सिवसम्मुख दीनी ॥
तजि सकल आस बनवास वस, नगन देह मद परिहरे।
ऐसे महंत मुनिराज प्रति, हाथ जोर हम सिर धरे॥१५६॥

पंच महाव्रत दुद्धर धरैं। सम्यक पांच समिति आदरैं॥
तीन गुपति पालैं यह कर्म। तेरहविध चारित मुनिधर्म॥
यातैं सधै मुक्तिपदखेत। गिरही-धर्म सुरगसुख देत॥
सो एकादस प्रतिमारूप। ते बरनों सच्छेप सरूप॥ १५८॥

पंच उदंबर तीन मकार। सात व्यसन इनकौ परिहार॥
दरसन होय प्रतिग्यायुक्त। सो दरसनप्रतिमा जिनउक्त १५९

ढाल।

श्रीगुरु सिच्छा साभलौ, (ग्यानी) सात व्यसन परित्यागौरे॥
ये जगमैं पातक बड़े, (ग्यानी) इन मारग मत लागौरे॥
जूवा खेल न मांड़िये, (ग्यानी) जो धन धर्म गवॉवैरे॥
सब विसननकौ बीज है, (ग्यानी) देखता दुख पावैरे १६१
रजबीरजसैं नीपजै, (ग्यानी) सो तन मास कहावैरे॥
जीव हते बिन होय ना, (ग्यानी) नाव लियां घिन आवैरे
सड़ि उपजै कीड़ां भरी, (ग्यानी) मद दुर्गंध निवासैरे॥
छीयासौं सुचिता मिटै, (ग्यानी) पीयां बुद्ध बिनासैरे १६३
धिक वेस्या बाजारनी, (ग्यानी) रमती नीचन साथैरे॥
धनकारन तन पापिनी, (ग्यानी) बेचै विसनी हाथैरे १६४
अतिकायर सबसौं डरैं, (ग्यानी) दीन मिरग बनचारीरे॥
तिनपै आयुध साधते, (ग्यानी) हा अतिकूर सिकारीरे॥
प्रगट जगतमैं देखिये, (ग्यानी) प्रानन धनतैं प्यारौरे॥
जे पापी परधन हरैं, (ग्यानी) तिनसम कौन हत्यारौरे॥

परतिय व्यसन महा बुरो, ( ग्यानी ) यामैं दोष बड़ेरोरे ॥
इहि भव तनधनजस हरै, ( ग्यानी ) परभव नरकबसेरोरे ॥
पाडवआदि दुखी भये, ( ग्यानी ) एक व्यसन रति मानीरे
सातनसौं जे सठ रचे, ( ग्यानी ) तिनकी कौन कहानीरे ॥

दोहा ।

पंच उदंबर फल कहे, मधु मद मास मकार ।
इनके दूपन परिहरो, पहली प्रतिमा धार ॥ १६९ ॥

चौपई ।

पांच अनुव्रत गुनव्रत तीन । सिच्छाव्रत चारो मलहीन ॥
वारहव्रत धारैं निर्दोष । यह दूजी प्रतिमा व्रतपोष ॥१७०॥

दोहा ।

अब इन बारह व्रतनकौ, लिखौं लेस विरतंत ।
जिनकौ फल जिनमत कह्यौ, अचुतस्वर्गपरजंत ॥१७१॥

ढाल ।

जो नित मनवचकायसौं, कृतआदिकसौं जेहो जी ॥
त्रसको त्रास न दीजिये, प्रथम अनुव्रत एहो जी ॥
बारहव्रत-विध बरनऊँ ॥ १७२ ॥
झूठवचन नहि बोलिये, सबही दोष निवासो जी ॥
दूजो व्रत सो जानिये, हितमित वचन संभासो जी ॥
वारहव्रत विध वरनऊं ॥ १७३ ॥
भूलो विसरो भूपरो, जो परधन बहु भायो जी ॥
विन दीयैं लीजै नहीं, जनम जनम दुखदायो जी ॥
वारहव्रत विध वरनऊ ॥ १७४ ॥

ब्याही वनिता होय जो, तासौं कर संतोषो जी ॥
परिहरिये परकामिनी, यासम और न दोषो जी ॥
बारहव्रत विध बरनऊं ॥ १७५ ॥

धन-कन-कंचन आदि दे, परिग्रह संख्या ठानो जी ॥
तिसना नागिनि वस करो, यह व्रत मंत्र महानो जी ॥
बारहव्रत विध बरनऊं ॥ १७६ ॥

अवधि दसों दिसि खेतकी, कीजै सवर जानो जी ॥
बाहर पाव न दीजिये, जब लग घटमैं प्रानो जी ॥
बारहव्रत विध बरनऊं ॥ १७७ ॥

कर मरजादा कालकी, करिये देस-प्रमानो जी ॥
वन-पुर-सरिता आदि दे, नित्त गमनकौ थानो जी ॥
बारहव्रत विध बरनऊं ॥ १७८ ॥

जहा स्वारथ नहि संपजै, उपजै पाप अपारो जी ॥
अनरथदंड वही कह्यौ, त्यागी पंच प्रकारो जी ॥
बारहव्रत विध बरनऊं ॥ १७९ ॥

सामायिक-विधि आदरो, थल एकांत विचारो जी ॥
उर धरिये सुभ भावना, आरत रौद्र निवारो जी ॥
बारहव्रत विध बरनऊं ॥ १८० ॥

पोपह व्रत आराधिये, चारौ परब-मंझारो जी ॥
चहुविध भोजन परिहरो, घरआरंभ सब छारो जी ॥
बारहव्रत विध बरनऊं ॥ १८१ ॥

दोहा।

एक हाथपै ग्रास धरि, एक हाथसौं लेय।
श्रावकके घर आयके, ऐलक असन करेय ॥ २०० ॥

यह ग्यारह प्रतिमा कथन, लिख्यौ सिधांत निहार।
और प्रस्न बाकी रहे, अब तिनकौ अधिकार ॥ २०१ ॥

चौपई।

जे जगमैं पापी परधान। सात व्यसनसेवक अग्यान ॥
रुद्रध्यान धारैं अघमई। अति ही क्रूरकर्म निर्दई ॥२०२॥
झूठवचन बोलैं सत छोर। परधन परवनिताके चोर ॥
बहु आरंभी बहुपरिग्रही। मिथ्यामतकौं पोषैं सही ॥२०३॥
चड कषायी अधिक सराग। जिनप्रतिमानिंदक निर्भाग ॥
मुनिवर निंदि पाप सिर लेहिं। जैनधर्मकौं दूषन देहिं २०४
नीचदेवसेवारसरचे। धरैं कृस्नलेस्या मद-मचे ॥
इत्यादिक करनी-रत रहैं। ऐसे नीच नरकगति लहैं ॥२०५॥

छप्पय।

सप्तमसौं पसु होय, देस सयम न संभालै।
छठे नरकसौं मनुष, होय व्रत नाहीं पालै ॥
पंचमसौं व्रत धरै, मोखगतिकौं नहिं साधै।
चौथेसौं सिव जाय, नही तीरथपद लाधै ॥
सब सुभ्रवाससौं आयकै, वासुदेव नहिं भव धरै ॥
प्रति वासुदेव बलदेव पुनि, चक्रवर्ति नहिं अवतरै ॥२०६

चौपई।

मायाचारी जे दुठ जीव। परपचनमैं निपुन अतीव॥
झूठ लिखैं अरु चुगली खाहि। झूठी साखि भरत भय नाहिं
सील न पालैं मोहउदोत। लेस्या जिनकै नील कपोत॥
आरतध्यानी धर्मविहीन। पसुपर्याय लहैं अकुलीन॥२०८॥
आरतरौद्ररहित नीराग। धर्म-सुकल-ध्यानी बडभाग॥
जिनसेवक पालैं व्रत सील। कसैं करन मदमाते कील२०९
जिनप्रतिमा जिनमंदिर ठवैं। सातखेत उत्तम धन बवैं॥
सदाचार सुन स्रावक होय। जथाजोग पावैं सुर लोय २१०
सहज सरल-परनामी जीव। भद्रभाव उर धरैं सदीव॥
मंद मोह जिनके देखिये। मंदकषायप्रकृति पेखिये॥२११॥
अलपारंभ अलप धन चहैं। उर कपोतलेस्या निर्वहै॥
पुन्यपाप नहिं बरतैं दोय। मिस्रभावसौं मानुष होय॥२१२॥
परके दोष सुनैं मन लाय। विकथा-बानी बहुत सुहाय॥
कुकविकाव्य सुन हरषैं जोय। ते बहरे उपजैं परलोय २१३
पढैं सुछंद विवेक न करैं। मृषापाठ विकथा विस्तरैं॥
परनिंदा भावैं बहुभाय। निजपरसंसा करैं बढ़ाय॥२१४॥
मलमूत्रादिक-भोजन-काल। मौन छाडि बोलैं बाचाल॥
झूठ कहत कछु संकैं नाहि। ते गूंगे जनमैं जगमाहिं॥२१५॥
परतियमुख देखैं करि नेह। निरखैं सब योनादिक देह॥
बधबंधन याचैं धरि राग। ते मरि आधे होहिं अभाग २१६

जे नर करैं कुतीरथ-गौन । बहुत बोझ लादैं बिनमौन ॥
वृथाविहारी देख न चलैं । होय पंगु ते पातक फलैं ॥२१७॥
नीति-बनिज करि लछमी लेहिं । ओछा लेहिं न अधिका देहिं
अलप वित्त दानादिक करैं । ते नर दरबधनी अवतरैं ॥२१८॥
जे धन पाय धरैं अभिमान । समरथ होकर देहिं न दान ॥
धनकारन छलछिद्र कराहिं । बढ़त परिग्रह धापैं नाहिं २१९
लछमीवंत कृपन जन जेह । परभव होंहिं दरिद्री तेह ॥
मंदकषायी सरलसुभाव । अहानिसि बरतैं पूजाभाव ॥२२०॥
निजवनितासंतोषी सदा । मंदराग दीखैं सर्वदा ॥
दुराचार जिनके नहि होय । पुरुषवेद पावैं सुरलोय ॥२२१॥
जे अतिकामी कुटिल अतीव । महा सरागी मोहित जीव॥
परवनितारत सोकसंजुक्त । ते कामिनि-तन लहैं निरुक्त २२२
रागअंध अति जे जगमाहिं । कामभोगसौं तृपते नाहि ॥
वेस्यादासीरक्त कुसील । ते नर लहैं नपुंसकडील ॥ २२३ ॥
मनवचकाय महानिर्दई । बध बंधन ठानैं अधमई ॥
परकौं पीड़ा बहुबिध करैं । ते जिय अलप आयु धरि मरैं ॥
कृपावंत कोमल परिनाम । देखि विचारि करैं सब काम ॥
जीवदयामैं तत्पर सदा । परकौं पीड़ा देहि न कदा ॥२२५॥
सबही जीवनसौं हितभाव । धरैं पुरुष ते दीरघ आव ॥
जे जिनजग्यपरायन नित्त । पात्रदानरत सीलपवित्त॥२२६॥
इंद्रीजीत हिये संतोष । ते नर भोग लहैं व्रत-पोष ॥
पूजादानविमुख मदलीन । इंद्रीलुब्ध दयागुनहीन ॥ २२७॥

दुराचार दुरध्यानी लोग। इनकौं प्रापत हौंहिं न भोग॥
समय विचारि पढ़ैं जिनग्रंथ। पढ़ैं पढ़ावैं जे सुभपथ।२२८।
हितसौं धर्मदेसना कहैं। ते परभव पंडितपद लहैं॥
ग्यानगरव हिरदैं धर लेहिं। जिनसिधांतकौं दूपन देहिं २२९
इच्छाचारी पढैं असुद्ध। ग्यानविनयवरजित जडबुद्ध॥
पढ़नेजोग पढ़ावैं नाहि। ऐसे मरि मूरख उपजाहिं॥२३०॥
अनाचाररत आरमवान। परकौं पीडन करैं अयान॥
पापकर्मरत धर्म न गहै। ते परभवमैं रोगी रहैं॥ २३१॥
परदुख देखि हरख उर धरैं। परवनिता परधन जो हरैं॥
नरपसुजीव बिछोहैं जोय। सो पुत्रादिवियोगी होय॥२३२॥
नीचकर्मरत करुना नाहिं। हाथ पांव छेदैं छिनमाहिं॥
जे परको उपजावै पीर। ते नर पावैं विकल सरीर॥२३३॥
जो मिथ्यामतमदिरा पियैं। पापसूत्रकी सरधा हियैं॥
धर्मनिमित्त जीवबध करैं। महाकपायकलुपता धरैं॥२३४॥
नास्तिकमती पाप-मग गहैं। ते अनंतससारी रहै॥
रतनत्रयधारी मुनिराज। आगमध्यानी धर्मजहाज॥२३५॥
इच्छारहित घोर तप करैं। कर्म नास करि भवजल तिरैं॥
उत्तम देव नमैं सिरनाय। पूजैं परम साधुके पाय॥ २३६॥
साधरमी-वत्सल मुनिप्रीत। उत्तम गोत बधैं इहि रीत॥
जे जिन जती जिनागम जान। नमैं नही सठ करि अभिमान
मानैं नीच देव गुरु धर्म। ये सब नीच गोतके कर्म॥
जिनके हियैं रमै वैराग। धारैं संजम तिसना त्याग॥२३८॥

अतिनिर्मल चारितभंडार । ग्यानध्यानतत्पर अविकार ॥
ख्याति लाभ पूजा नहिं चहैं । ते अहमिंद्-संपदा गहैं २३९
पंच करन वैरी वस आन । चारित पालैं अति अमलान ॥
दुद्धर तप कर सोखैं काय । चक्री होंय देवपद पाय ॥२४०॥
जे सम्यकदृष्टी गुनग्रही । सोलहकारन भावैं सही ॥
ते तीर्थंकर त्रिभुवनधनी । होहिं तीन-जगचूड़ामनी ॥२४१॥

दोहा ।

इहिविध पूछनहारकौं, समाधान जिनराज ॥
कीनौ गनधरदेवप्रति, जगतजीवहितकाज ॥ २४२ ॥
बानी सुन बारह सभा, भयो सबन आनंद ॥
जैसे सूरजके उदय, विकसै वारिजवृंद ॥ २४३ ॥
वचनकिरनसौं मोहतम, मिट्यौ महा दुखदाय ॥
वैरागे जगजीव बहु, काललब्धिबल पाय ॥ २४४ ॥

चौपई ।

केई मुक्तिजोग बड़भाग । भये दिगंबर परिग्रह त्याग ॥
किनही श्रावक-व्रत आदरे । पसुपर्याय अनुव्रत धरे ॥२४५॥
केई नारि अर्जिका भई । भर्ताके संग वनकौं गईं ॥
केई नर पसु देवी देव । सम्यकरत्न लह्यौ तहां एव ॥२४६॥
केई सक्तिहीन संसारि । व्रत भावना करी सुखकारि ॥
पूजादानभाव परिनये । जथाजोग सब सेवक भये ॥ २४७ ॥

दोहा ।

कमठ जीव सुरजोतिषी, करि वचनामृतपान ॥
वम्यौ बैर मिथ्यात्व विष, नम्यौ चरन जुग आन ॥२४८॥

सम्यकदरसन आदर्‌यौ, मुक्तितरोवरमूल ॥
संकादिक मल परिहरे, गई जनमकी सूल ॥ २४९ ॥
तहां सातसै तापसी, करत कष्ट अग्यान ॥
देखि जिनेसुरसंपदा, जग्यौ जथारथ ग्यान ॥ २५० ॥
दई तीन परदच्छिना, प्रनमैं पारसदेव ॥
स्वामि-चरन संयम धर्‌यौ, निंदी पूरव टेव ॥ २५१ ॥
धन्य जिनेसुरके वचन, महामंत्र दुसहंत ॥
मिथ्यामत-विषधर-डसे, निर्विष होहिं तुरंत ॥ २५२ ॥
कहां कमठसे पातकी, पायौ दरसन सार ॥
कहां पाप-तप-तापसी, धर्‌यौ महाव्रत-भार ॥ २५३ ॥
जिनके वचनजहाज चढ़ि, उतरे भवजलपार ॥
जे प्रतच्छ आये सरन, क्यों न होय उद्धार ॥ २५४ ॥
अब श्रीगनधरदेव तहं, चार ग्यान परवीन ॥
जिन समुद्रतै अर्थजल, मतिभाजन भर लीन ॥ २५५ ॥
नाम स्वयंभू दयानिधि, विविधरिद्धिगुनखेत ॥
द्वादसांग रचना करी, जगतजीवहितहेत ॥ २५६ ॥
परमागम अम्रतजलधि, अवगाहैं मुनिराय ॥
जन्मजरामृतदाह हरि, होंय सुखी सिव पाय ॥ २५७ ॥

चौपई।

प्रथम एकसौ बारह कोड। लाख तिरानवै ऊपर जोड ॥
बावन सहस पांच पद सही। द्वादसांगकी परमित कही २५८

पद्धडी।

इक्यावन कोड़ी आठ लाख। चौरासी सहस सिलोक भाख॥
छस्सै साढ़े इक्कीस जान। यह एक महापदकौ प्रमान॥२५९॥

दोहा।

इहि विध सभासमूह सब, निवसै आनंदरूप॥
मानौं अम्रत नीरसौं, सिंचत देह अनूप॥ २६०॥

चौपई।

तब सुरेस उठि विनती करी। हाथ जोर सिर अंजुलि धरी॥
भो जगनायक जगआधार। तीन भवनजनतारनहार॥२६१॥
यह विहारअवसर भगवान। करिये देव दया उर आन॥
भविकजीवखेती कुम्हलाय। मिथ्यातपसौं सूखी जाय॥२६२॥
भो परमेस अनुग्रह करो। बानीबरसासौं तप हरो॥
मोखमहापुरके परधान। तुम विनजारे दयानिधान॥२६३॥
प्रभुसहाय भवि सुखपद लेहिं। आवागमन जलांजुलि देहिं॥
इहिविध इंद्र प्रार्थना करी। सहसनाम करि थुति विस्तरी२६४
भयो अनिच्छागमन जिनेस। भविजीवनके भावविसेस॥
सकलसुरासुर जय जय कियौ। जिनविहारअम्रतरस पियौ॥
गमनसमय औरै विध भई। समोसरनरचना खिर गई॥
चले संग सुर चतुरनिकाय। चउविध सकल चले सुरराय २६६
सुरदुंदभि बाजैं सुखकार। जिनमंगल गावैं सुरनार॥
हाथ धुजाजुत देवकुमार। चले जाहिं नभमैं छवि सार॥२६७॥
चहुंदिसि चार चारसौ कोस। होय सुभिच्छ सदा निर्दोस॥
नभविहार जिनवरकै होय। जीवघात तहां करै न कोय।२६८।

सब उपसर्गरहित भगवंत। निरआहार आयुपरजंत॥
चतुरानन देखै संसार। सबविद्यापति परमउदार॥ २६९॥
प्रभुके तनकी परै न छाहिं। पलक पलकसौं लागै नाहिं॥
नख अरु केस बढ़ै नहि जास। ये दस केवल-अतिसय भास२७०
भाषा सकल अर्थ मागधी। खिरै सकल संसयहर सधी॥
नरपसु जातिविरोधी जीव। सब उर मैत्री धरैं सदीव॥२७१॥
नानाजाति बिरछ दुख दलैं। सब रितुके फल फूलनि फलैं॥
प्रभुसचारभूमि मनिमई। दर्पनवत आगम बरनई॥ २७२॥
सुरभि पवन पीछै अनुसरै। वायुकुमारजनित सुख करै॥
सुरनरपसू सभागत जेह। परमानंदसहित सब तेह॥२७३॥
मारुतसुर जोजनमित मही। करैं धूलितृनवर्जित सही॥
मेघकुमार करै मन लाय। गधोदकवरसा सुखदाय॥२७४॥
चरनकमल जिन धारैं जहां। कंचन कमल रचैं सुर तहां॥
सातकमलतैं आगैं ठान। पीछैं सात एक मधि जान॥ २७५॥
यो पंकजकी पंद्रह पांति। सबा दोइ सै सब इहिभांति॥
सुकलध्यान उपजे बहुभाय। निर्मलदिसि निर्मल नभ थाय
मुदित बुलावै देवसमाज। भविजनकौं जिन-पूजनकाज॥
धर्मचक्र आगे संचरै। सूरजमंडलकी छबि हरै॥ २७७॥
मंगलदर्व आठ झलकाहिं। जथाजोग सुर लीये जाहि॥
ये चौदह देवनकृत जान। वरअतिसयमंडितभगवान २७८
करैं विहार परमसुख होत। भविजीवनके भाग उदोत॥
स्वर्गमोखमारग प्रभु सार। प्रगट कियौ भ्रमतिमर निवार २७९

कहीं कुलिंगी दीसैं नाहिं । भानु उदय ज्यौं चोर पलाहिं ॥
सब निज निज वांछाअनुसार । पूरनआस भये तनधार २८०
कासी कौसलपुर पचाल । मरहठ मारूदेस विसाल ॥
मगध अवंती मालवठाम । अंग बंग इत्यादिक नाम ॥२८१॥
कीनौ आरजखंड विहार । मेटौ जगमिथ्याअँधियार ॥
अब सब गनकी गनना सुनो । जथापुरानकथित विध मुनो
प्रथम स्वयम्भूप्रमुख प्रधान । दस गनधर सर्वागमजान ॥
पूरवधारी परमउदास । सर्व तीन सै अरु पंचास ॥ २८३ ॥
सिष्य मुनीसुर कहे पुरान । दसहजार नौ सै परवान ॥
अवधिवंत चौदह सै सार । केवलग्यानी एकहजार ॥२८४॥
विविध विक्रियारिद्धिवलिष्ट । एकसहस जानो उतकृष्ट ॥
मनपरजयग्यानी गुनवंत । सातसतक पंचास महंत ॥ २८५ ॥
छसै वादविजयी मुनिराज । सब मुनि सोलहसहस समाज ॥
सहस छवीस अर्जिका गनी । एकलाख स्रावक व्रतधनी २८६
तीनलाख स्रावकनी जान । बरनी संख्या मूल पुरान ॥
देवीदेव असंख्यअपार । पसुगन संख्याते निरधार ॥ २८७ ॥
इहविध बारह सभासमेत । रतनत्रयमारगविध देत ॥
विहरमान दरसावत बाट । सत्तर बरस भये कछु घाट २८८
सम्मेदाचल सिखर जिनेस । आये श्रीपारसपरमेस ॥
एक मास जिन जोग निरोध । मनवचकाय क्रिया सब रोध २८९
सूच्छम कायजोगथिति ठान । त्रितियसुकलसंजुत तिहिं ठान
तजि सयोगिथानक स्वयमेव । आये फिर अयोगिपद देव २९०

पंच लघुच्छर है थिति जहां। चतुरथ सुकलध्यानबल तहां॥
दोयचरम समये जिन भनीं। प्रकृति बहत्तर तेरह हनी २९१
इहिविध कर्म जीत भगवान। एक समय पहुंचे निर्वान॥
औ छत्तीस मुनीसुर साथ। लोकासिखर निवसे जिननाथ२९२
सावन सुदि सातैं सुभ वार। विमल विसाखा नखतमँझार॥
तजि संसार मोखमैं गये। परमसिद्ध परमातम भये॥२९३॥
पूरव चरम देहतैं लेस। भये हीन आतम परदेस॥
अष्टगुनातममय व्यवहार। निहचै गुन अनंतभंडार॥२९४॥
सादि अनतदसा परिनये। सिद्धभाव वसुगुनजुत थये॥
परमसुखालय वासो लियौ। आवागमन जलांजलि दियौ॥

दोहा।

पंच कल्यानक पाय सुख, जगतजीव उद्धार।
भये पूज्य परमातमा, जय जय पासकुमार॥ २९६॥
जिनके सुसकौं ग्यानकी, नहि उपमा जगमाहि।
जोतिरूप सुखपिंड, थिर, इंद्रीगोचर नाहि॥ २९७॥
अब तिनकौ आकार कछु, एकदेस अवधार।
लिखौं एक दृष्टांत करि, जिनसासन अनुसार॥ २९८॥

चौपई।

मोममई इक पुतला ठान। नखसिख समचतुरस्रसठान॥
सब तन सुंदर पुरुषाकार। नराकार इसही विध सार २९९
माटीसौं इमि लेपहु सोय। जैसे त्वचा देहपर होय॥
कहीं अंग खाली नहिं रहै। सब उपचारकलपना यहै ३००

धूम प्रभामै उपजि, भील अति भयौ भयानक।
चरम नरक पुनि सिंघ, फेर पंचमभू-थानक॥
पसुजोनि भुंजि महिपाल नृप, देव जोतिषी अवतरयौ॥
इहि विध अनेक भवदुख भरे, वैरभाव-विषतरु फल्यौ ३१९

दोहा।

छिमाभाव फल पासजिन, कमठ वैर फल जान।
दोनौं दिसा विलोककै, जो हित सो उर आन॥ ३२०॥

सोरठा।

जीव जाति जावंत, सवसौं मैत्रीभाव करि।
याकौ यह सिद्धंत, वैरविरोध न कीजिये[1]॥ ३२१॥

सवैया।

जो भगवान बखान करी धुनि, सो गुरु गौतमने उर आनी।
तापर आइ ठई रचना कछु, द्वादस अंग सुधारस बानी॥
ता अनुसार अचारजसंघ, सुधीवलसौं वहु काव्य बखानी।
यों जिनग्रंथ जथारथ हैं, अजथारथ हैं सव और कहानी॥

दोहा।

जितने जैनसिद्धांत जग, ते सब सत्यसरूप।
धर्मभावना हेत सब, हितमित सिच्छारूप॥ ३२३॥
कलपित कथा सुहावनी, सुनते कौन अरत्थ।
लाख दाम किस कामके, लेखन लिखे अकत्थ ३२४

---

१ उक्त च—
सत्त्वेषु मैत्री गुणिषु प्रमोद, क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्व।
माध्यस्थ्यभाव विपरीतवृत्तौ, सदा ममात्मा विदधातु देव॥ ३२३॥

सोरठा।

सुन श्रीपार्सपुरान, जान सुभासुभ कर्मफल।
सुहित हेत उर आन, जगत जीव उद्यम करो ॥ ३२५॥

दोहा।

प्रभुचरित्र मिस किमपि यह, कीनौ प्रभु-गुनगान।
श्रीपारस परमेसकौ, पूरन भयौ पुरान ॥ ३२६ ॥
पूरव चरित विलोकिकै, भूधर बुद्धिप्रमान।
भाषाबंध प्रबंध यह, कियौ आगरे थान ॥ ३२७ ॥

छप्पय।

अमरकोष नहिं पढ्यौ, मैं न कहि पिंगल पेख्यौ।
काव्य कंठ नहिं करी, सारसुत सो नहिं सीख्यौ ॥
अच्छर-संधि-समास-ग्यानवर्जित बुधि हीनी।
धर्मभावना हेत, किमपि भाषा यह कीनी ॥
जो अर्थ छंद अनमिल कही, सो बुध फेर सवारियौ ॥
सामान्यबुद्धि कविकी निरखि, छिमाभाव उर धारियौ

दोहा।

जिनसासन अनुसार सब, कथन कियौ अवसान ॥
निज कपोलकल्पित कही, मति समझो मतिवान ३२९
छयउपसमकी ओछसौं, कै प्रमादवस कोय ॥
इहिविध भूल्यौ पाठ मैं, फेर सवांरो सोय ॥ ३३० ॥
पंच बरस कछु सरससे, लागे करतन बेर ॥
बुधि थोरी थिरता अलप, तातैं लगी अबेर ॥ ३३१ ॥

सुलभ काज गरुवो गनै, अलपबुद्धिकी रीत ॥
यौं कीड़ी कन ले चलै, किधौं चली गढ़ जीत ॥ ३३२॥
विघनहरन निरभयकरन, अरुन वरन अभिराम ॥
पासचरन संकटहरन, नमो नमों गुनधाम ॥ ३३३ ॥

छप्पय ।

नमों देव अरहंत, सकल तत्त्वारथभासी ॥
नमों सिद्ध भगवान, ग्यानमूरति अविनासी ॥
नमों साध निरग्रंथ, दुविध परिग्रहपरित्यागी ॥
जथाजात जिनलिंग धारि, वन वसे विरागी ॥
वंदौं जिनेसभाषित धरम, देय सर्व सुख सम्पदा ॥
ये सार चार तिहुँलोकमैं, करो छेम मंगल सदा ॥३३४॥
संवत सतरह सै समय, और नवासी लीय ।
सुदि अषाढ़ तिथि पंचमी, ग्रंथ समापत कीय ॥३३५॥

इति श्रीपार्श्वपुराणभाषाया भगवन्निर्वाणगमनवर्णन नाम
नवमोऽधिकार ।

